





# उलूक-तन्त्र

( हार्वरस्की कदानियोका समूह )

लेखक  
बलदेवप्रसाद मिश्र

प्रकाशक



१९४७

( मूल्य १।०० )

---

मुद्रक—महतावराय, ज्ञानमण्डल अंत्रालय, कबीर चौरा, काशी ।

---

## दो शब्द

इस पुस्तकका अन्तिम कर्मा मेरी 'भूमिका'के लिए उपनेसे अर्चित कर दिया गया, यह दिव्य ज्ञान मुझे जब 'कगया गया तब 'दो शब्द' लिखाना मुझे उचित ही समझा।

इस सङ्ग्रहमें रास कथा-निर्घा हैं जिनमेंसे प्रथम तीन और चौथी वन १९४१ के दिवास्वयंके अन्तिम सत्राहमें, छठी सन् १९४६ के बुलाई सत्रीनेमें, चौथी गत हांसीके कुछ पत्रले और अन्तिम दो महीने पहले किमी बरकी थी । १९५५, १९५६ और १९५७ कथा-निर्घा प्रकाशित हो चुकी हैं । प्रथम दो 'संसार' में और तीसरा 'आजा' में ।

ये कथा-निर्घा कदाचित् साम्य-प्रधान नहीं जायेंगी । कुछ सङ्गनेने—जिनमें कभी जारमें न होयेंगाले तथा तस्परसावतार भी हैं—हाश्वरग-के चिपयमें संस्कृतके आचार्योंका विधेचन, अपनी हिन्दीमें सजा कर तथा अपने 'सौकिक' विचारोंके पैवन्द लगाकर, बहुत बार अप्ना लिया है और इस प्रकार उन-साधारणके अज्ञानको और धरनेही कृतकल्प किया है । यह काम कर रखनेके लिए मैं उनका कृतज्ञ हूँ ।

कुछ दिनों पहले कहीं कुछ कहानी-लेखकों का सम्मेलन हुआ था । मुना है कि वहाँ लेखकोंने पढ़नीकी कलाके चिपयमें अपने निखरे विचार व्यक्त किये, 'सुहास' पेश किये और उनकी बुद्धिमें अपनी पूरी कथा-निर्घा बाँध बाँकी और उनकी विशेषताएँ, श्रौताओंके मस्तिष्कोंमें,

कर्ण-कुहरोंके मार्गसे, टेल दीं ।.....मेरी ये कहानियाँ कैसी हैं, इस-पर विचारके ब्याजसे मैं अपने पाठकोंके मस्तिष्कके साथ वैसा व्यवहार न कर सकूँगा । कारण, ये कहानियाँ ठीक-ठीक कहानियाँ भी हैं कि नहीं, मैं इसी विषयमें सन्दिग्ध हूँ । मैंने जो कुछ लिखा है, वह क्या है, इसके निर्णयके लिए ही मैं पाठकोंका सुन्वापेक्षी हूँ । वे जो कुछ कहें, वही मान लेनेके लिए मैं विवश हूँ । पर मेरी विवशतासे आर्द्र होकर कोई पाठक अपने हृदयके साथ अन्याय न करे । वह न्यायपर आश्रुत रहे, तभी मुझे सुख प्राप्त होगा ।

ग्रन्थकी त्रुटियोंके लिए प्रकाशक ही दायी होता है, यह सिद्धान्त ईश्वरकी तरह सत्य है, यद्यपि पुस्तकका अन्तिम प्रूफ मैंने भी देखा है; और इत्नीलियु 'चरमडीद' गवाह हूँ कि कोई समन्तुद त्रुटि मेरे देखनेमें न आयी ।

—लेखक

## विषय-सूची

विषय	पृष्ठ
१—उलूक-तन्त्र ...	१
२—ब्रह्मदेवत्य ...	२४
३—ब्राह्मीकल्प ...	५१
४—मालिना ...	७४
५—अमृतचण्ड्री ...	८२
६—शोफेदानल ...	११३
७—महा-फोला ...	१२७





## उल्लूकतन्त्र

वह महीना था जिसमें एक विशिष्ट देवीके वाहन मोटे होते हैं। स्वर्गमें उर्वशीके घरमें किसी पुण्यात्माने प्रवेश किया था और प्रसन्नतामें बाहर एक विराट् अनारमें आग लगावा दी थी। अग्निकी फुलझड़ियाँ पृथ्वीतक आ रही थीं। \* \* \* \* \* दूसरेके सुखसे दुःखी होना मानव धर्म है। पृथ्वीके मानव अत्यन्त दुःखी थे, दुःखके मारे पसीने-पसीने हो गये थे और सर्वत्र इस कष्टकी ही चर्चा थी। अस्त्रवारोंमें यह कष्ट दिवियोंमें नापकर छापा जा रहा था। एक अग्निवारके उपाहारकनी सम्पूर्ण देवकी उक्त कष्ट-गाथा छापनेमें इतने तल्लीन थे कि उनके समुद्र किताबों चौकमें की सेवापर छोड़ दिया था।

धड़ियोंकी सूइयाँ उस गानवकी रक्तमग दे रही थीं, जिसे शास्त्रोंने आदमके लिए प्रशस्त बनाया है। उनके पैरोंके दलाल 'नण्डाली बेल' कहते हैं।

सड़कोंके चौराहोंके (पुल्लिस्के) सिपाही किसी पान या शरबतकी टूटानपर जा बैठे थे और आगनी मूली नागपानमें नार बनवा रहे थे कि एक भिन्न कोटिमें अन्नक वेला-द्वयों अरुणत अशुभ रहस्य 'गान्ध' गया था या अन्नक अशुभे—दुःखके—अशुभ आदर्मी या आँसु उल्लूक चन्दा-धेनु—सर्प-दण्डन—निरुक्त अकार प्रिय। इनकी नागपान का कभी उक्त मकी थीं नर का किस्सेन किस्की-निसी मालकीन मलेखादी—दुःखतन्त्र अकार पावर, फिर अशुभ पान थी। अशुभ मारम क्याके तन शीके—एरकी धरिद अक—आ रहे थे; कोई मन्त्र अकारदी

कवि कदाचित् स्वर्ग और नरककी दुसुहानीपर पहुँचकर किसी अज्ञात प्रियतमकी स्मृतिमें, वहाँ बैठ पड़ा था और लम्बी-लम्बी साँस ले रहा था। इस समय सड़कोंपर डाक्टरोंकी मूक कृतज्ञताके भारसे दबे वे जीव दिखलायी पड़ रहे थे, जिन्हें सनातनधर्मी अपने पितरोंके नामपर लोहेके गरम त्रिशूलसे दाराकर, उनके पालन-पोषणके भारसे छुटकारा पा जाते हैं; और वे जीव दिखलायी पड़ रहे थे जो जनताके कानूनके ज्ञानके अज्ञानका भार प्रसन्नता-पूर्वक ढोनेके लिए, सरकारसे लाइसेंस प्राप्त कर, सरकारकी ही स्थापित कचहरी में न्याय प्रदान करने में प्रसिद्धि प्राप्त करने में। इस संस्थाका लाभ ... है कि सरकारने उक्त नीतियों को अन्य व्यवसाय करनेसे रोक दिया है। कम-से-कम इतने अंशमें सरकार साम्यवादकी पौष्टिक अवश्य है।

क्रिष्णकविचित्त जलनरयण अर्थात् शहर बनासमें अनेक घटनाएँ ऐसी हो चुकी हैं कि आर कहीं नहीं हुई—तुलसीदासजीको यहाँ प्लेस हुआ, राजा चेतसिंह एक मिड़कीने संगीचीयें रुके, भारतेन्दु हरिश्चन्द्रने प्रीत्यन्तस्थानमें ही संसारीकी अस्पृष्टता विद्वत् कर दी और उनके मसालचीने काय सावरण हाथ मिलाना; अनेक घटनाएँ ऐसी हैं जो कहीं नहीं हो रही हैं—बर्तमानके प्रकाशकोंकी जितनी सामग्री सरकारमें मिल रहा है, उससे बहुत अधिक कामजगर में पुस्तकें छापते जा रहे हैं; कालेजोंके प्रोफेसर अवकाश लेकर कीर्तन कर रहे हैं; ब्राह्मणोंके पठन-पाठनकी देख-रेख शूद्र कर रहे हैं;—अनेक घटनाएँ न होंगी—महामहोपाध्यायोंके वंशधर संतुष्ट न पदोंमें योग पदों न निरदोंगे, तुलसीदास न अपना, ... न होंगी, बन्दिशोंके विपरीत पौष्टिक विरोध न होगा, सरकार परा विकसी प्रवन्धककी नियुक्ति न होनेसे बड़े बन्दिशोंका प्रवन्ध सुचारु रूपसे न हो सकेगा और प्रवन्धक दायज बिना पिये बन्दिशों का ल प्रवन्ध न कर सकेंगे।

इस प्रकार घटना-घटाटोपोंसे भण्डित काशीको छोड़कर अन्वय जाना अत्यन्त अनुचित बात होता है—विशेषतः जब लोग बड़ी-बड़ी दूरसे, पैसा खर्च करके, मरनेतकके लिए यहाँ आते हैं ।

अतः यह घटना भी काशीकी ही है; उसी काशीकी, जहाँकी हवा भी आँखोंमें धूल झोंकनेमें पट्ट है, जहाँके दूकानदार भी अपने ग्राहकोंको दो-चार पैसोंकी माया छोड़नेको कहकर उन्हें ब्रह्मज्ञानके राजमार्गपर बलात् ढकेल देते हैं, जहाँके बगलबन्दी पहननेवाले ब्रह्मज्ञानी पण्डित भी लखनऊ और दिल्लीके चुनाव-दङ्गलोंमें गीखुर-प्रमाण नोट पटनकर उत्तर पड़ते हैं, जहाँके—पर जाने दीजिये, इसी काशीसे अभी काम पड़ता है ।

सो, इसी काशीकी गंगाभीके एक घाटके उपरकी एक गलीके एक मकानके— पर आप इस घाट के ऊपर धीमे, अतः पहले गलीकी बात समाप्त कर ली जाय । गलीका नाम क्या है लखनऊवा या जैसा बिहारके आरनिपेटका होता है । उसके नामसे कभी ही धनियाँ निकली थीं, जैसी जनार्दन निकली हैं । नामसे हम बात बोधा था कि पहले यहाँ धनियाँ-सुर-धमक दिवाकर नाईं जगज्ज जले थे और एक दिन रातको १० बजे उन्होंने अपने सेवकोंको तलवारोंका मोरचा लुडवानेकी आज्ञा दी । सेवक तलवार लेकर गलीमें उत्तर पड़े और आने-जानेवालोंकी चर्ची और खुरसे मोरचा लुडवाने लगे । जब गहरीगैने गहाँ जाना बन्द कर दिया और मोरचा लुडवाने रुक गया तब तब तक आपसीमें एक दूसरे पर धम पड़े । सेवकोंके अन्तर्गत काश्या ही कदाचित् मन्त्रालय प्राधान्यमें बहाने पड़े गये—तीर्थयात्रुका तब कुल छोड़कर । सेवक प्रेम-सहमीर परकर फल ही फल तब तबतब भी रातको कहीं उड़ते थे । गहरी-गाँवे धामसे ही अपने-आपने घरोंमें बन्द हो जाते थे । उभ गरीबों तो लोभ राजकी आते-आते थे उन्हें प्रीत चपल परकर मनोविनाद करते थे

और उनकी मिटाई तथा मलाई छीन लेते थे। कहा जाता है कि काशीमें विजली लगनेके पहलेतक उस गलीमें ये बातें होती थीं।

इसी गलीके एक मकानकी बात है। मकानका सिंह-द्वार—सिंहोंसे इस द्वारका कोई सम्बन्ध न था। न उसमें कभी सिंह नामके आदमी बँधे थे न जानवर। इसलिए आप निःशंक होकर उसमें प्रवेश करें—उस दिशामें था जिसमें भगवान्‌के एक भीषण भक्तने अपनी भाभीकी भृकुटिसे शासित होकर अपनी प्रजाका शासन किया था। तात्पर्य श्रीमान् महाराज विभीषणसे है।

सिंह-द्वारसे बसते ही दाहिने हाथ एक २॥ हाथ ऊँचा दरवाजा था। उसने लगी कौड़ियाँ एक तहखानेमें चली गयी थीं। दरवाजेपर अलकतराँते गाँठ आसनों लिये था—‘सिद्धोंकी सराय’।

१२ हाथ लम्बे, ४ हाथ चौड़े और ४॥ हाथ ऊँचे उस तहखानेमें उस समय चार सिद्ध बैठे थे।

तहखानेकी दीवारें उदात्तार्थिक समरूपोंसे ढकी हुई थीं और गेरुके सर्वत्र राम राम लिखा हुआ था। चिकनी कर्णपर कुछ चित्रानेकी जबरत नहीं समझा गया था। ६-७ गालतकिये, १ मगरी, भाजेके १ गिलास, शतरंज, ताश, दरी, हाथभरका चौकोर एवं मोटा एक हुकड़ा तथा १६ कौड़ियाँ भी सरायकी सम्पत्ति थी।

सिद्धोंके नाम थे—खेमटा तिवारी, चन्दनसिंह, कद्दूगुरु और कुन्दा-यनविहारी श्रीवास्तव।

इन सज्जनोंको आप न जागते होंगे क्योंकि ये श्मशानके कब्रियोंकी तरह आत्म-प्रकार नहीं करते। ये आत्मीय कितने कृपियों बार बार बात सुनाते। इस सम्बन्धमें ये सिद्धोंके उस कब्रियोंके अलगाव करने कारण

हैं जिन्होंने अपने जीवनमें एक ही कविता लिखी है और उसे ही सर्वत्र मुनाया करते हैं ।

खेमटा तिवारी गृहस्वामी और 'सिद्धोंकी सराय' के संस्थापक हैं । उनके पिताकी अन्तिम इच्छा एक धर्मशाला बनवानेकी थी । उसीकी इन्होंने इस रूपमें पूर्ति की है । तिवारीजी एक ही बात बार-बार कहा करते हैं । वह यह कि बाल्यकालमें स्वास्थ्यके किन नियमोंका पालन न करनेसे उनके उदरमें वायुने अड्डा जमा लिया है और किस-किस समय वह उच्छ्वस्युल होकर किस-किस दिशामें दौड़ती है । तिवारीजी भूत-प्रेत नहीं मानते, पर ४९ तरहकी वायुका अस्तित्व स्वीकार करते हैं ।

चन्दनसिंहके बायें हाथमें भी इतनी शक्ति है कि वे आपका मुँह काला कर दें या आपको पङ्कु कर दें या आपके अङ्गोंको इतना विकृत कर दें कि आपको कर्ज देनेवाला कालुजी भी आपको न पहचान सके । अर्थात् वे चित्रकार हैं । उन्होंने चित्रोंद्वारा अलिप्तकैय, त्रिगुणचित्र आदिका अनुवाद किया है जो मूलसे भी उत्तम हैं । उनका कथन है कि रंगोंकी विविधता और चौखटेपर ही जिवन्त परम्परा अन्वर्तिका होती है ।

कहू नून तान्त्रिक हैं । काव्य प्रकाश परनेके पक्षे वैने सब बातोंकी एक एक प्रेरो सुनते हैं। वे सब बातें जाना-बाना होता है, जैसे ही तान्त्रिक होनेके लिए भी उनके कर्माङ्गोंका ज्ञान आवश्यक होता है । तान्त्रिक होनेके पक्षे तन्त्रिक, धर्मिकता, रसिक, वैयक और ताश खेलनेकी कल्पना प्रसारण, तथा आपदाका, विचारकता और मानव-प्रवृत्तिका विविध ज्ञान आवश्यक होता है । ( यह सब मूल एकान्तमें कहा करते हैं । ) जो वे, कहू नून तान्त्रिक हैं, अतः तान्त्रिक होनेके लिए जिन गुणोंकी आवश्यकता होती होगी, वे सब उन्हींमें हैं; इन यह मान सकते हैं ।

बृन्दावनविहारी श्रीवास्तव वस्तुतः क्या हैं—हम नहीं कह सकते । पर, सिद्धोंकी सरायके वे उच्चकोटिके सदस्य हैं, अतः उनकी अमाधारणतामें सन्देह नहीं । इनकी ब्राह्मणोंपर विशेष आस्था है, विशेषतः एक घटनाके बादसे । वह घटना इस प्रकार है—पर उसे जाननेके पहले यह जान लीजिये कि तभीसे उन्होंने ब्राह्मणोंके सम्पर्कमें जीवन वितानेका नियम कर लिया है ।

हाँ, तो वह घटना इस प्रकार है । तब श्रीवास्तवजीकी पत्नी जीवित थी । उन्हींके कारण वह घटना भी हुई थी । सभी बड़ी घटनाएँ स्त्रियोंके ही कारण हुई हैं ।

श्रीवास्तवजीकी पत्नीने उन्हें बुलाके खानेको कहा था ; कई दिनोंमें कह रही थी । एक दिन रातको ११ बजे उसीकी चर्चा चली । उनको पत्नीने उसी समय खानेको कहा ; उन्हें दस आने पैसे दिये और उन्हें गलीमें भ्रष्टा करके, परबरा दरवाजा बन्द कर दिया—साथ महीना था ; आकाश में बादल थे—अत्यन्त परोपकारी, पर-जन्य ! उन्होंने अपने प्राणोंकी परवाह न कर अपना जीवन बहाना प्रारम्भ कर दिया और सभी गौरीशंकर ( पाठकोंकी सुविधाके लिए उमदा प्रंगरेजी नाम दिया जाता है—माउण्ट एवरिस्ट ) पर खड़ा गधा डालना होकर सर्वे उस शहरपर झुक आया । उन समय कुन रोने लगा, गलीपर बैठे कौआोंने पङ्क फड़-फड़ाये और पक्षोंको दृढ़ कर लिया और श्रीवास्तवजीके घरसे गलीमें फेका कूड़ा—जिसमें अण्डोंके छिलकें और प्याजकी ऊपरी तलेकी गगानना थी—उड़कर उनके मुँहपर आने लगा ।

श्रीवास्तवजी कड़े-कड़े आगे-पीछे दिलमें उसे जैसे महत्त्व गम कर-प्रतीक थाण हमनेपर खर-रूपम दिखे होगा । वे यह विचार कर रहे थे कि सम्भवतः हिन्दू भी शास्त्रकारोंकी स्त्री-विरक्तता जानना शान न

था जितना तुलसीदासजीको था । पर, तुलसीदास धर्मशास्त्री नहीं—  
अतः श्रीवास्तवजी—‘ये सब ताड़नके अधिकारी’ को पूर्ण सत्य और  
आवश्यक मानते हुए भी तदनुसार काम करनेमें हिचकें और अन्तमें  
उसी तेजीसे आगे बढ़ें, जिस तेजीसे गङ्गाके उस पारकी हँडिया आँधीके  
वेगसे लड़क चलती है । पर, वृन्दावनविहारीजीका लक्ष्य निर्दिष्ट था ।  
वे तुलकको दूकानोंकी ओर बढ़ रहे थे ।

दूकानें बन्द हो गयी थीं, केवल एक दूकानदार ताले बन्द कर रहा  
था । श्रीवास्तवजी उसके पास पहुँचे और उसी दूकानदारको कहकर गोलियाँ  
तुलक दे देनेको कहा, जिस आँजिजीसे तुलक दे देनेको कहते हैं ।

दूकानदारने एकद्वार उनकी ओर देखा, वे उस समय ऐसे खड़े थे  
जैसे तपोभङ्गके बाद और उसका फल प्रकट होनेके पहले महर्षि विश्वामित्र  
मेनकाके सामने खड़े हुए थे । तब दूकानदार पुनः अपने काममें लग  
गया । श्रीवास्तवजीने उससे यह कहकर प्रारम्भ किया कि तुलक न  
मिलनेसे संसारमें किन किन विघ्नानिर्वाही आनन्दता हो सकती है । उन्हें  
विश्वास था कि उन क्षणोंमें जो न कोई ताली बन्द कर दूकानदारके  
दिलका ताड़न प्रकट होगी और तब उसकी तालियाँ दूकानके ताले खोल देंगी ।

ताले बन्द करने करने दूकानदारने जो कुछ कहा उसने उसका बंद  
गन्धेह प्रकट हुआ कि श्रीवास्तवजी किसी स्थान विशेषमें निरादर प्रिये गये हैं ।

ताले बन्द कर, बंद खोल देकर, दूकानदार श्रीवास्तवजीकी ओर  
पूरा और उनमें अति निर्यत भयके स्थिति कर कहा—‘वेद, इस वक्त  
निर्गम धर्मशास्त्रमें जाकर ली जाती । वेदमें उक्त हो तो सबसे आता ;  
ऐसी तुलक देना कि बर्षाकी वर्षाका स्वर हो जायगी ।



दूकानदारके चले जानेके बाद श्रीवास्तवजी उस भगवानको कोभने लगे जिसने तुनियामें गर्धों और उल्लुओंको पैदा किया है और उनकी बुद्धि आदमियोंको दे दी है ।

वहाँसे श्रीवास्तवजी चासी नीराकी दूकानपर पहुँचें । उन्होंने उस सरकारकी दूरदर्शिताकी प्रशंसा की जिसने इन दुकानोंको शामहीसे बन्द न होनेकी आशा दे रखी है । प्याजकी गरमागरम पकौड़ियोंका पुट देकर, नीराके दो कुल्हड़ चढ़ाकर जब श्रीवास्तवजी वहाँसे बाहर निकले, तब उनकी बुद्धिपरसे मायाका आवरण खिसक गया था—उन्हें धर्मशाला और सड़ककी पटरीमें कोई अन्तर प्रतीत न होता था । उन्होंने पहले एक दूकानके तख्तेके एक अंशपर आसन जगना और पीरे पीरे तख्तेपर दायल कर लिया—वे उस समय इस घटनाकी अंग्रेजोंके भारतपर कब्जा करनेकी घटनासे तुलना कर रहे थे । वे धर्मशालामें नहीं गये, पर यह समझ गये कि लोग धर्मशालाएँ क्यों बनवाते हैं । उसी समय उन्होंने कभी घर न जानेका निश्चय किया और जीवन-भर बिना पैसों खर्च किये भोजन प्राप्त करनेका प्रकार भी सोच लिया ।

दूसरे दिन ११ बजे एक क्षेत्रके एक पान्थक प्राणियों एक भयानक अत्याचार किया । उसमें एक मर्दा हिल उठा । उसका एक आदमीको पड़े भूकानके दरवाजेके भीतरसे एक गलीमें उड़ती ताकत और साथ ही अर्धचन्द्र देकर इस प्रकार शोक दिया कि कई श्रुतियों और कुहनियोंके ब्रह्म जमीनपर बहुत दूर बंटा रह गया ।

कुछ देर बाद वह आदमी उठकर खड़ा हुआ, उसने अपने चारों ओरके लोगोंको देखा, अपने कपड़े झाड़े और भाव देते-देते वहाँ शान्तिले कहा— इस तरह धरम-मुक्ती करके पिण्ड नहीं घूटता । धर्म निष्ठा है जो आधा करना होगा !

ब्राह्मणदेव चकित होकर उस आदमीका मुँह देखने लगे और वह अर्थात् श्रीवास्तवजी गम्भीर गतिसे आगे बढ़े । चलते-चलते श्रीवास्तवजीकी ब्राह्मणोंपर बहुत श्रद्धा हुई । उसका कारण है । श्रीवास्तवजीने दो दिनों पहले जापानी जुजुत्सूके बारेमें पढ़ा था । वह देख उस विषयका भारतमें प्रथम था । उन्होंने सोचा कि ब्राह्मण विलयित जाते नहीं और दो दिनोंमें ही ब्राह्मणोंमें जुजुत्सूका इतना प्रचार होना भी असम्भव है; अतः जापानियोंने ही इन ब्राह्मणोंकी किसी पोथीसे उसे सीखा । ये ब्राह्मण तो भयंकर हैं ! जितनी शीघ्रतासे और जितनी दूर रहकर उग ब्राह्मणने श्रीवास्तवजीको गली मुँघ्रा दी थी, वह जुजुत्सूकी ही करामात थी—इसका श्रीवास्तवजीको निश्चय था ।

तो, सिद्धोंकी सरायमें चार सिद्ध बैठे थे । खेमटा तिवारीने क्रुद्ध स्वरमें कहा— देखो कड़ू गुरु ! तुम मेरे घरमें उलूक लाये हो, यह अच्छी बात नहीं है !

आलमारिमें, लोहेके पिंजड़ेमें तीन बिल्ला ऊँचा एक उलूक बैठा था । कड़ू गुरु एक भावतकियेके सहारे बैठे हुए थे । उगी वादरयामें रहकर और सिगरेटका एक लम्बा कश खींचकर गुर्देका नाभयने निहता-शत हुए, वे ही-ही करके हँस पड़े और उग बिल्लामें उठ बैठे । उनका सिर प्रायः पार्श्वके कश गया और दो-दो बिल्लेके कशोंने उनका नैत बिलकुल छिपा लिया ।

उगीका नेत्र क्लान्त होनेपर उन्होंने पृथक्-पृथक् स्थानमें जो लक्ष्मण कड़ू, भक्तवत्सव शर कि बहुत दिनोंमें एक उलूक रहता है । बिल और एक स्थानमें जोर क्या ?

खेमटा तिवारीने कहा— देखो, दिव्यवर्ण दिव्यवर्णकी जगह होती है तुम्हीं कहाँ, यह अरागुनका रूप नहीं है ?

चन्दनसिंहने कहा—जो हो, पर इतना बड़ा उलूक नहीं देगा था कइ गुरु ! मैं इराका फोटो बनाऊँगा, तुम उसके साथ रहोगे ।

श्रीवास्तवने पूछा—कहाँसे लाये कइ गुरु ?

कइ गुरुने कहा—विन्ध्याचलके घनघोर जङ्गलमेंसे मँगावाया है । वर सेंसे इसके फेरमें था ।

श्रीवास्तवने पूछा—आखिर इसका करोगे क्या ।

खेमटाने कहा—करेगा क्या ! अरे, इसको बुद्धि उलूकों-जैसी हो गयी है ।

कइ गुरुने कहा—इसका एक गुन जानते हो ? इसे एकान्तमें रखकर इराके रामने किसीका नाम लो और फिर वह दूरग नाम न सुनने पाये । तब यह उलूक वही नाम अपने मनमें कटता रहेगा और ६ गहीनेके भीतर यह आदमी गर जायगा । सगले खेमटा तिवारी ?

खेमटा तिवारीने बहुत क्रुद्ध-दृष्टिमें कइ गुरुको देखा और दीङ्कर तहनामके दरवाजेपर पहुँचे और बाहर झाँकने लगे । सामने ही उलूक था । वह स्थिर नेत्रोंसे तिवारीको देखने लगा । खेमटा तिवारी निश्चय -  
कइ गुरु ! कइ गुरु !

कइ गुरुने कहा—आदमी हो कि उलूक क्या कहते हो ? यहाँ आकर क्यों नहीं कहते ?

खेमटा तिवारी निश्चिन्ततासे आकर बैठ गये और श्रीवास्तवकी जेबमें हाथ डालकर सिगरेटका पैकेट निकाला ।

कइ गुरुने पूछा—क्या कहते थे ?

तिवारीने कहा—कुछ तो नहीं ! मैं तो उलूकों तुम्हारा नाम सुना रहा था क्योंकि वह मेरा नाम सुन चुका था ।

कड़ू गुरुने मुस्कराकर कहा—मैं तान्त्रिक हूँ । उसका उपाय कर लूँगा ।

श्रीनास्तबने कहा—कड़ू गुरु ! यह उल्लू मुझे दे दो ।

चित्रकारने कहा—तुम क्या करोगे ! जिसके सामने १५ दिन खड़े हो जाओ, वही मर जाय ।

तिवारीने कहा—कड़ू गुरु ! तुम झूठ बोलते हो ! उल्लू तुम दूसरे कामके लिए लाने हो । कुछ दिन पहले तुमने बापके नामपर साँड़ छोड़ा था, अब उल्लू छोड़ोगे । है न !

कड़ूने कहा—तुम तो गधे हो गधे ! नहीं तो तुम्हारा नाम तो भले आदमियों जैसा होता !

यहाँ एक बात और कह दी जाय । खेमटा तिवारीका कहना है कि 'खेमटा' मेरी कुल-देवी हैं, उन्हींके नामपर मेरा यह नाम है ; पर उनके शत्रुओंका कहना है कि उनके पिता सङ्गीतकी खेमटा नामक शाखासे बहुत निहते थे और एक दिन तिवारीपर नाराज होकर उन्हींने उसे खेमटा कहकर पुकारा । वस, तभीसे यही नाम प्रसिद्ध हो गया ।

तिवारीने कहा—गधोंने गिरपरसे नीलकण्ठ उड़ाये जाते हैं, तुम...

कड़ूने कहा—तुम गधे हो ! लेकिन तुम्हकी गंधा कदना भी तुमगुरी राजन बनाता है । गधे तो कड़ू बुद्धिमान होते हैं ।

श्रीधारावने रामभीष्मासे कहा—जल्द होने देंगे ! गुरुगुरि बाप दसी-लिये तुम्हें जतामपर राक्ष कदना यद ।

कड़ू गुरुने श्रीनास्तबका कानपर जम भी गंधा न भेते हुए कहा—मैंने जराबन्ध बुद्धिमान होने हैं । एक धार...

श्रीधारावने कड़ू गुरुका शोककर कहा—अब रुक जाओ । तुम जानते ही हो, सखे निवारण है । उन्ही इस वक्त जाकसण किया है । इसे

न रोकनेसे ३-४ घंटोंके लिए मेरी आत्मा शरीरके बाहर निकल जाती है, केवल साँस चलती रहती है।

श्रीवास्तवने अपनी जेबसे एक बोतल निकाली और चन्दनसिंहसे एक गिलास माँगा। चन्दनसिंह गिलास लाये तो तिवारीने उसे छीन लिया, कहा—तुम तो तिगानीके शंख (अंधे) हो। वह दूसरा गिलास दो, जिसपर चमार लिखा हुआ है।

श्रीवास्तवने गिलासमें बोतलका अर्क ढालते हुए कहा—कहू गुरु! यह खास तरहसे बनी है—अंगूरोंकी लताओंके कुझमें, आधी रातको; और आधी रातको ही नावमें रखकर शहरमें और मकानके पिछले दरवाजेसे भीतर लायी गयी; इसके बाद—

तान्त्रिकजी बोले—तिवारी! एक पुरवा तो दो!

पुरवा आनेपर तान्त्रिकजीने उसमें अर्क लिया, थोड़ा पानी मिलाया और अंगूठे एवं तलके, चादकी तांगणों उँगलीके सिरोंको जोड़कर उनमें पुरवेमें कुछ लिखनेका भाव दिखाने लगे। उस समय उनके जीठ भी हिल रहे थे। अन्तमें उन्होंने पुरवा उठाया, उसे सिरसे लगाया और कहा—परशुरामाय नमः।

दो चूँट पीकर कहू गुरुने कहा—एक बार एक प्रयोगमें मुझे गर्दम-मूत्रकी आवश्यकता पड़ी। मैं अपने धोबीके यहाँ गया। उसने कहा—महाराज! हम न देख, हमारा गदहवा मर जाई।

तब मैं एक चौड़े मुँहका बरतन लेकर धोबी-घाटपर गया। वहाँ भी बंधिन्दोंने आपत्ति दी। मैंका पादर मैं एक राधकी और बढ़ा। मुझे यह नहीं मालूम था कि गधेकी "पादर" कैसी जानत है। उस चुपचाप ही आगे बढ़ा। एकदम पादर जानर बैठनेपर गधेके तान राधे भिन्ने और कुलत्तियाँ झाड़ीं। मेरा बरतन हाथसे छूटकर गंगाजी में आर जात

लगा और मैं खटाखट सीढ़ियाँ चढ़ने लगा। मेरे पीछे ४०-५० धोबी चले आ रहे थे। १००-१२५ सीढ़ियाँ चढ़कर मैं एक मठमें हुआ गया। धोबियोंकी भीतर हुसनेकी हिम्मत न पड़ी।

श्रीवास्तवने पूछा—धोबियोंने शोरगुल नहीं किया ?

कड़ू गुरुने कहा—उन लोगोंने जितना शोरगुल किया उससे मैं समझ गया कि इनके गधे इनसे बहुत अधिक शिष्ट और शान्त हैं। तैर, किसी तरह वे चले गये।

कई दिनों बाद मैंने एक गधा खरीदा और उसे रेवड़ी तालावपर गफूरके मकानमें रखा।

तिव्वारीने कहा—यही बुद्धि पहले आ गयी होती तो अच्छा न होता।

कड़ू गुरुने कहा—उस गधेने वहाँ आते ही अनजान प्रारम्भ किया और मेशाव करना बन्द कर दिया। मैंने उसके चारों पैर चार खूंटोंमें बाँध दिये और कमरमें एक कनकर बाँध दिया। सत दिन बीत गये, सातवें दिन एक शान्त गधा मकानमें आकर मेशाव किया। अन्तमें मैं उसे गफूरको दानकर चला आया। वह, गधे नष्ट होकर मरने में। मुझे तो प्रत्यक्ष अनुभव है।

चित्रकारने पूछा—तो तुम्हारे उस प्रयोगका क्या हुआ ?

कड़ू गुरुने कहा—उस गधेके कारण सैकड़ों रुपयोंपर पानी फिर गया और नतीनीकी मेशाव बेकार हुई।

श्रीवास्तवने कहा—सक ! वह उद्धृत तो गुरुने ही है। तिकट लगाकर दिखाओ तो दिग्दर्शके होने पर उसे निकल जाने।

गुरुने कहा—यथा ही विदा करवा लोदी में एक उद्धृत ३००) मर्यादा विदा कर सकता है। कैसे ? राजा गालकेअनसिद्धके पुरोहितके

उनसे कहेंगे कि तांत्रिक कटू गुरुके पास एक उलू है जो किसी आदमीके यहाँ एक महीना भी रह जाय तो उसकी लक्ष्मी स्थिर हो जाय। पुरोहितजी ही ५००) पर उनके यहाँ एक महीनेके लिए उलू रखना पक्का कर लेंगे। अब २००) पुरोहितजीके, ३००) मेरे। यह खबर सभी रईसोंको मिलेगी और सभीके यहाँ पारीसे यह उलू रहेगा।

तिवारीने कहा—रईसोंके यहाँ दस-पाँच उलू बने ही रहते हैं, इसे भी वहीं रख दो और तुम भी वहीं रहो; मुझे कोई आपत्ति नहीं, पर यहाँसे हटाओ। तुम लाने क्यों यहाँ ?

गुरुने कहा—हमारे घर, जानते ही हो, खाना है।

श्रीवास्तवने कहा—इसलिए इस उलूकी जरूरत नहीं थी।

गुरु बोले—तुम बड़े नीच हो। अरे, वे हंगामा खड़ा कर देते न !

तिवारीने कहा—तो मेरा ही मकान राँड़की शोपड़ी है ? अभी उलू सहित धता बाराठ (बिदा) होओ।

गुरुने कहा—सुनो, एक उलूक-तन्त्र होता है। वह दिवालीकी रातको किया जाता है। दिवालीकी रातसे चार हफ्ते पहले सृगक्षिरा नक्षत्रमें शनीचरके दिन उलू पकड़ा जाता है। तबसे दिवालीकी राततक उसे पाला जाता है। उसे खास ढंगका खाना खिलाया जाता है। दिवालीकी रातको उसका तांत्रिक विधिसे पूजन होता है। पूजनके बाद वह बोलना आरम्भ करता है। वह धीरे-धीरे बोलता है।

चित्रकारने पूछा—आश्चर्या की तरह ?

गुरु बोले—एकदम आदमीकी तरह नहीं, पर उसकी बात समझमें आती है। वह १०८ बातें बतता है। साभकको उन्हें लिखने जानना चाहिए। १०० बातें बतानेके बाद वह जन्दी जन्दी बोलना दे। अन्तकी आठ बातें बहुत महत्वपूर्ण होती हैं, पर यदि वह आठों बातें कह जाय

तो साधकका सिर कटकर गिर पड़ता है । इसलिए ३-४ बातें सुननेके बाद ही उसकी गर्दन काट डालनी चाहिए ।

श्रोता स्तब्ध हो गये । कुछ देर बाद श्रीवास्तवने पूछा—क्या बातें बताता है ?

गुरुने कहा—वह यह बताता है कि मेरे किस अंगका क्या उपयोग है । जैसे, आँखोंको कई चीजोंमें पीसकर अञ्जन बना लिया जाय और उसे लगाया जाय तो जमीनमें गड़ा धन दिखायी पड़ने लगता है; पञ्जोंको और चोंचको पीसकर उसका धुआँ शरीरको दिया जाय तो आदमी अदृश्य हो जाता है ।

श्रीवास्तवने कहा—कहें चलो, अभी तो दो ही बातें कहीं ।

तिवारीने कहा—१०० के ऊपर हो जायें तो सावधान रहना ।

कहूँ गुरु चुप रहे । उन्होंने अब भैंसोंके आगे वीन न बजानेका निश्चय कर लिया था ।

एकदमक श्रीवास्तव भी उठकर खड़े हो गये । शरीर झाड़कर उन्होंने कहा—गुरु ! हर एक आदमीके होता है कि नहीं, परन्तु यहाँ पर मेरे शरीरमें ये चतुर्माओंका वास होता है । एक साधारण आत्मा तो प्रायः हर जगत् जाती है । वह जगत् रहती है जगत् में साधारण कर्म करता हूँ, जैसे खाना-पाना, सोना, सुषारं साथ सजाकर करना, सम्बन्धपूर्ण नीति बदलती रहना जैसे सचनोक्ति या सेवा किया करते हैं, आदि । पर कभी-कभी मेरे शरीरमें ये साधारण आत्मा नहीं जाती है और साधारण आत्मा आ जाती है । एकदम मेरे ही अस्तित्वमें मैंने विचारके १ वर्ष बाद स्वतः अपनी पत्नीका आचरण ही जानकर लिया था, इनके बाद आत्मा स्वतः कर्मको अच्छा करने लगी । एक बार ईश्वरकी सेवा विष्णुकी इच्छा हुई थी । मुझे कुछ लगानेका मन भावना था, कई परीपकार करनेको विचार हुआ



था, कई वर्षोंका बाकी टैक्स दे डालनेकी प्रेरणा हुई थी, दिमागसे सम्बन्ध रखनेवाला कोई काम करनेका जी चाहा था—तिवारी उस समय मिलते तो मैं इनका सिर तोड़ डालता। आज, इस समय, वही असाधारण आत्मा मेरे शरीरमें प्रविष्ट हो गयी है, पर न मैं तुम्हें जूते लगाऊँगा, न तिवारीका सिर तोड़ूँगा। इस समय मुझे एक विचित्र अनुभूति हो रही है। मुझे भास हो रहा है कि मैं एक मन्दिर बनवाऊँगा। यह भी भास हो रहा है कि पहले मुझे उल्कतत्र सिद्ध करना होगा और तब मन्दिर बनवानेमें तुम तीनोंकी सहायता लेनी होगी। उसे उल्कतत्रकी सिद्धि होगी—कदासीसे १८४ मील पश्चिमके एक नगरमें। कद्दू गुरु ! यह उल्क किसके लिए लभे हो ?

कद्दू गुरुने कहा—पाँच हफ्ते बाद दिवाली है। ४ दिनों बाद शनीचर और मृगशिरा नक्षत्र है। मेरे कई शिष्य बहुत दिनोंसे कोई सिद्धि करनेको कह रहे हैं। सोचा था, एकको इस बार उल्कतत्रकी सिद्धि करा दूँगा, और किसी कारण कोई न बन सके तो मैं ही कर दूँगा।

तीनोंनानने क्या-क्या असाधारण आश्चर्य तुमको आज्ञा है कि इन बार मुझे ही यह सिद्ध करावो; नहीं तो दिवानेसे सम्बन्ध रखनेवाला कोई काम मुझे करना पड़ेगा। बस उठो, उठाओ उल्कू, चलो मेरे साथ ! तिवारीजी ! नमस्कार। चन्दन सिंह ! चिरञ्जीव ! अब दिवाली बाद भेंट होगी; अगर तुमलोग जीने रहे।

श्रीवाराणसी आयेन लैगो दलामें उठे और उल्कका पिण्ड उठाकर चला दिये। कद्दू गुरु—'रुको, रुको' कहते हुए उनको पीछे दौड़े।

तिवारीजी चन्दनसिंहको उसी प्रकारकी दृष्टिमें देखने लगे, जिस प्रकारकी दृष्टिसे उल्कने उन्हें देखा था।

दिवाली बाद—

सिद्धोंकी सरायमें एक दिन पूर्वोक्त चारो सिद्ध विराजमान थे । समय वह था जिसे तथागतने चौराहोंपर खड़ा होनेके लिए निषिद्ध बतलाया है ।

कङ्क गुरु बहुत गम्भीर थे । श्रीवास्तवजीके हाथमें शीशका एक गिलास था । उन्होंने कहा—बच्चा तिवारी ! यह पिपासा राक्षसीके समान है, इसके आक्रमणसे मेरा कण्ठावरोध हो गया था । अब वह कुछ शान्त हुई है । अब मैं तुम्हारी जिज्ञासा शान्त करता हूँ ।—

जब मैं यहाँसे गया तो यह सोच रहा था कि तुमलोगोंसे अब भेंट होगी कि नहीं । मैं सदा यही समझता हूँ कि मृत्यु तिवारीकी चौटी और चन्दनसिंहका कान पकड़े हुए है; क्योंकि चन्दनसिंहके चौटी नहीं । पर, यह सोचकर सन्तोष हुआ कि यदि भर भी गये तो भेंट होगी—तुम दोनों भ्रत होकर जरूर भेंट करोगे ।

तो, कङ्क गुरु मेरे पीछे-पीछे गये थे । इन्होंने सन्तान-वृक्षाक्षर में चहाँ-ले गया, जहाँ मेरे निदिन होनेवाली थी । इन्होंने एक निदिन मुझे कटावनी और मैं तदनुसार सब काम करने लगा ।

दिवालीकी रातको मैंने उद्धृतजीको सोपनीके जलसे स्नान कराया, उद्धृतजीके आका निकलवा किया, उद्धृतजीका नाम सिद्धाक्ष और साधन-सहायके प्रवेश किया । कङ्क गुरु गहरे बैठे ।

मैंने कर्मिका द्वारा बन्धन किया । उद्धृतजीको दो ही रत्न भये । मैं जीम ( यह सोपनी ) वह उद्धृतजीका । उद्धृतजीके आका निकलवा किया, उद्धृतजीकी आका निकलवा किया, उद्धृतजीका नाम सिद्धाक्ष और साधन-सहायके प्रवेश किया । कङ्क गुरु गहरे बैठे । मैंने कर्मिका द्वारा बन्धन किया । उद्धृतजीको दो ही रत्न भये । मैं जीम ( यह सोपनी ) वह उद्धृतजीका । उद्धृतजीके आका निकलवा किया, उद्धृतजीका नाम सिद्धाक्ष और साधन-सहायके प्रवेश किया । कङ्क गुरु गहरे बैठे । मैंने कर्मिका द्वारा बन्धन किया । उद्धृतजीको दो ही रत्न भये । मैं जीम ( यह सोपनी ) वह उद्धृतजीका । उद्धृतजीके आका निकलवा किया, उद्धृतजीका नाम सिद्धाक्ष और साधन-सहायके प्रवेश किया ।

किया । मेरा आँखें बन्द करना व्यर्थ हुआ । मैं विचित्र जन्तुओं और राक्षसोंको देख रहा था । वे दौड़ते थे, चीखते थे, उछलते थे, मुझे चिढ़ाते थे, हँसानेकी चेष्टा करते थे ; पर मैं आसनसे चपका रहा ।

इधर मनुष्यकी खोपड़ीमें बन्दरकी चरखी भरी गयी थी और दोनों आँखोंके छेदोंमें दो विशिष्ट वस्तियाँ जलाई गयी थीं । उनके जलनेसे एक विचित्र गन्ध कमरेमें भरी थी । साथ ही नाना प्रकारके माँसोंकी गन्ध भी थी । उद्धरराज स्थिर दृष्टिसे मुझे देख रहे थे—उस दृष्टिमें अथ मुझे क्रूरता, हिंसा और लोभ दिखायी पड़ रहे थे ।

जप समाप्त हुआ । मैंने उद्धरराजका पुनः पूजन किया, नैवेद्य सामने रखा और राज-गन्धका सामाजिक जप करने लगा ।

उद्धरराज उठे, पद्म पाड़फाड़के, और शरीरको जैसे झकझोर दिया । उनके रोएँ खड़े हो गये, वे फूलज्वर दुगुंग हो गये और उन्होंने मुँह खोलकर एक विकट बूत्कार किया । इसके बाद नैवेद्यकी ओर बढ़े और हिरनके माँसका एक बहुत बड़ा टुकड़ा लेकर उसे पक्षों और चौचमों इस तेजीसे टुकड़े-टुकड़े कर दिया कि मैं क्या कहूँ । कुछ टुकड़े और रक्त-विन्दु भरे अन्तर आकर भिंसे ! इसके बाद उन्होंने कुछ खाया और तब मधु-मात्रसेम भोजन शय्य पिया । तब वे आँखें बन्द कर खड़े हो गये । भौंड़ी दर बार देँ बोलने लगे—

साधक ! तुने राज-मन्त्रमें व्यतिक्रम कर दिया । अब मैं आठ ही बातें बताऊँगा । तू आठ बातें सोच ले । मैं उन्हींका उत्तर दूँगा ।

इतना कहकर श्रीमानस पुनः हुए, अपना विकृतगान्ध तथा दुगुंग ले लये और भाव संतरे—

मैं तो भवसा अन्ध ! अज्ञ सिद्धता गयी । निजी प्रकार मैंने प्रश्न सोचे । उद्धरराज उधर बने लगे ।

अब श्रीवास्तवने एक कागज जेवसे निकाला । उसपर यह लिखा था—

१—काशीमें...स्थानपर...मकानमें आज तीन महीने बाद भूमि फोड़कर रामचन्द्रजीकी मूर्ति निकलेगी । वह मकान तू ले ले । वहीं मन्दिर बनवाना ।

२—मन्दिरके चढ़ावेसे तेरे निर्वाहकी व्यवस्था हो जायगी और तेरे मित्र भी सुखसे रहेंगे । मूर्ति निकलनेके चार दिनों बाद एक सप्ताहके स्थिर लोगोंका दर्शन करना बन्द कर देना और इसी बीच मूर्ति-प्रतिष्ठा करा देना ।...

३—काशीमें राजघाट पुलके आगे एक हरिजन बेताल सिद्ध कर रहा था । एक दिन वह बहुत भूखा था । उसी समय एक उल्टने उसके पास एक डब्बा गिराया । उसमें अमेरिकन विस्कुट थे । हरिजनने उन्हें खाकर प्राण-रक्षा की । इस पुण्यक कारण वह उल्ट मानन-पौषिणो प्राप्त हुआ । उसका नाम खंभटा तिवारी है ।

४—अब मैं वेजीटेबिल घी बनानेकी गहरी निधि खोजता हूँ । जर्मनी नामक देशमें विधाने जमीं अलग बरतके रख बरते हैं । जगती महाशयमें एक जमींका मकानसे गावित करके उसमें खेड़ा नामक और नमूर मिलानकर कान्हालीमें बन्द कर लेता ।

५—मिल-मालिक बननेका प्रकार यह है—किसी बड़े आधुनिकीके मालिक एक लिमिटेड कम्पनी कायम करे और उसके मैनेजिङ्ग टाईटलपर रख जायें । अपने शेयर अपने पारसन्तोंमें बँटवें । जमीन खरीदने, प्यारत बनवाने और मशानें खरीदनेमें दो-चार व्यय भार दो । काम शुरु होनेपर कितने आम आयदा हो और इसका प्रकार करो । शेयर जब बढ़े तोकर बिकने लगे तो शर्त खरीद लो । बच, मिल मुहानगी हो गयी ।

६—सोना बनानेका प्रपार—ताँबेके पत्तरकी किसी कड़ुके श्फरों

खूब रगड़ो। तब उसे सात दिन गंदेके फूलोंके रसमें डाल दो। इसके बाद पारिका—

कागजमें इतना ही लिखा था। श्रीवास्तवने कहा—उलूकराज बहुत जल्द बोलने लगे। मैंने धक्काकर उनकी गरदन काट दी। मुझे मालूम हुआ कि भूकम्प आया है, बन्दर चीख रहे हैं, ऊँट बलबल्य रहे हैं...

होशमें आनेके बाद मैंने त्रिसर्जनकी क्रिया समाप्त की और बाहर आया। कटहू गुरु सोये हुए थे।

कटहू गुरुने कहा—यह बकता है। उस समय कुण्डलिनी जाग्रत होकर मेरे प्राणोंको चाट रही थी। उस सुखमें मैं मूर्च्छित था। इस मधेने मुझे बड़े जोरसे झकझोरा। कुण्डलिनी सड़कसे नीचे उतर गयी, प्राण विनष्टित हो गये। हो सकता था कि मैं मर ही जाता। इसीसे नारा है—अनादिमंत्रा सच्च न करो।

श्रीवास्तवने कहा—निवारी! दिवालीकी रातसे तुमपर मेरा प्रेम बूना हो गया; कारण यह कि तुम उसी मन्त्रकर्मत्रामें जो निवारी लगाने में मन्दिर बनवाऊँगा। अब मैं तुम्हारे किसी दिन आपसे मुझ से आर्तुण, निवारण उलूक-पत्र भरा हो क्योंकि वह तुम्हारा प्राण नहीं, वह तो संस्कारका फल है।

निवारी उठकर जाड़े हो गये और कुछ क्षणमें धीमे—इस श्रीवास्तव, दिहङ्गीकी भी हव होती है! उसके आगे मत बढ़।

श्रीवास्तवने उलूकर निवारीके चरण छुए और कहा—तुम जो चाहे कहो, अब मैं नाराज नहीं हो सकता। सुनो, मन्दिर बनवानेमें तुमने सहायता करनेकी क्या था।

निवारीने कहा—दरमर्ग पत्नी (हिस्सा) रहेगी न ?

श्रीवास्तवने कहा—तुम सब मन्दिरका प्रसाद निगलित करने आस करोगे।

तिवारीने कहा—तो मैं कदियद हूँ ! तुमने चाहे उल्क-तन्त्रसे यह सब जाना हो, चाहे कुकुर-तन्त्रसे ।

चन्दनसिंहने कहा—सबसे पहले उस जमीनको हथियाना चाहिए । कड़ू गुरु बोले—उसका जिम्मा मैं लेता हूँ । चार दिनोंमें रजिस्ट्री हो जायगी ।

× × × ×

पन्द्रह दिनों बाद नगरमें यह विज्ञापन बैठा—

**रामचन्द्रजीका स्वप्न—बाबा वृन्दावनविहारीकी जय**

भव सनातनधर्मियोंको विदित हो कि मोहला.....के.....मकानमें रामचन्द्रजी आजसे आठ दिन बाद भूमिमेंसे निकलेंगे । हिमाचलके तपसी बाबा वृन्दावनविहारीने वह मकान आठ दिन पहले खरीदा और उसी दिन उनका भक्तवत्सल रामचन्द्रजीका स्वप्न हुआ । अब वहाँ पूजा जारी है । भक्तोंमें प्रवेश करनेका प्रार्थना है ।.....

भक्तोंकी सीधे उक्त मकानपर पहुँचने लगी । मकानभरसी फर्श ताजी थी । आँगनके एक कोनेमें बड़ी-बड़ी गणेश दादी-भूषणदादे वगैरे बाबाजी जमीनपर साथ ही रखे बैठे थे । वेभया तिवारी और निम्नकार महाशय कीर्तन करा रहे थे । लोग आते थे, कुछ देर खड़े रहते थे और चले जाते थे । कुछ कीर्तनमें भी शामिल होते थे ।

दो दिनों बाद भौवनके फर्शमें दरारें पहने लगीं । मकानका आगमन बढ़ा, फर्शाल-झाँझोंके शब्दोंसे पड़ोसी तड़प उठ गये ।

तीसरे दिन जमीनमें कोई चीज जग बाहर निकली, शम्भुका भगवत रामचन्द्रका चित्र बाहर आ गया । बाहरमें खड़े यहाँ फर्श थी । गैरकर्म भक्त दो दिनोंसे वहीं जम गये थे । चौथे दिन शम्भुका बाहर आया । माण्डू, पैस-नगणों और मिट्टाइयोंसे आँगन गूट गया । कड़ू गुरु

इन सब चीजोंको बगलके एक कमरेमें फेंकने लगे ।...शहरके कितने ही नास्तिक आस्तिक हो उठे । सारा शहर उमड़ पड़ा—कोई दर्शनके लिए, कोई छिद्रान्वेषणके लिए, कोई दर्शनार्थियोंके दर्शनके लिए । स्कूलों और कालेजोंके लड़केतक पीछे न रहे ।

चौथे दिन रातको एक सप्ताह मन्दिर बन्द रहनेको घोषणा की गयी और उसका उद्देश्य बताया गया । तत्क्षण मन्दिर बनवानेके लिए ५-७ हजारका चन्दा हो गया ।

मन्दिरके पट बन्द होनेके बाद बाबा वृन्दावनविहारीके पास कष्ट गुरु आये । पेटके नीचे एक खूँटेमें बाबाजी बँधे हुए थे, वह रस्मी खोली और उन्हें सीधा किया ।

तिवारीने कहा—कमरेमें ज्यादा दर्द हो तो एक ल्यात हुमास कर । बाबाजीने कहा—थोड़ा अंगरासव दो, और क्या नाम उसका कि एक प्लेट मुर्गमुसल्लम ।

बाबाजीको ये चीजें देकर, तीनों सिद्ध बगलके कमरेमें धँस पड़े और छॉट-छॉटकर बादामकी बर्फी, मूँगके लड्डू और परवलकी मिठाई खाने लगे ।

यह कृत्य समाप्त हो जानेके बाद बाबाजीने कहा—अब खुदाईपर जुटो । भगवानको निकालो ।

तीनों गिद्ध फर्दा खोदने लगे । बाबाजी निर्देशक थे । भूतचि शिकटनेके बाद तिवारीने प्रष्टा—

क्यों बाबाजी ! भगवानके नीचे चने कहाँसे आये ?

बाबाजीने उत्तर दिया—भगवानकी माया ! देखो, भीतर कमरेमें ८ बोरे हैं । उन्हें लाओ और चना भर दो ।

चन्दनसिंहने कहा—मैं पहले विज्ञानका छात्र था । उस ज्ञानके बलपर फल समझा हूँ कि किसी कदूमें चना भरकर, उग्रगण मूर्ति रसी जाय और तब पानी भरकर, उपास्य जनकी फर्दा बना ली जाय । ताँ २-४ दिनों बाद चना फूलकर भूतियोंको जन्म देकर देगा ।

बाबाजीने कहा—तुम राधे हो। भगवान् खाली हाथ कैसे आते ?  
वे प्रसाद रूपमें चना लये हैं। कल शहरमें वितरण करना।

कहू, गुमने कहा—मन्दिरका आर्डर दे दिया था। वह तैयार है।  
आठ दिनों बाद प्रतिष्ठा होगी। उसका विज्ञापन बनवाना है।

बाबाजी बोले—अब मैं एक बड़ खोदूँगा।

तिवारीने कहा—फिर वही ! शराब पीकर वहकने लगते हो।

बाबाजीने कहा—जुप रह ! वह बड़ पैसा होगा, जिसमें एक पैसा  
भी न लगेगा। भगवान्के नामका बड़। लोग काराज्-स्थाही-कलम  
हमारे बड़से कर्ज ले जायेंगे और नाम लिखकर देंगे। कामना पूरी होनेपर  
(११) प्रसादके लिए देंगे। महीनेमें १० गाढ़क भी मिले तो ११२॥  
हका। एक नारदकी कीर्तन भी बँटा दिया जायगा। शुरूमें मर्द  
जायेंगे, काशी जायेंगे तो न जायेंगी। हर महीने दो एकादशी पड़ती हैं,  
जिन पर उपासना है। गगनवसीको अखण्ड कीर्तन और परिक्रमा होगी।  
माटमें २५ हजार तो कहीं गये नहीं हैं।

गगनवसी बोले—कौनसे कला तुमपत्तिसजाज होती हैं। तुम नदीमें—  
बाबाजीने कहा—कनार न कर। नद कन्ना देना है ! किल्लादि  
है। कितनी ही औरतोंने उरण गाथा सुनकर अपना अपना स्वयंसेवक  
दान्त प्राप्त की है। तू जायेंगे कानसे क्या जानना है !

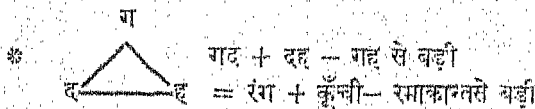
× × × ×  
भी शराबपिए बना चुका है। शराब पीने-जानके विषयमें शक है,  
तुम बड़ पैसा ही जानते हैं। भगवद्की और एक कहना है। उरण  
कहना है। शिरोवही कथा। उसमें शराब सुनते हैं—जीन कथा !  
उपर कथाकेविषय और कथाके अन्त कहना है। कथाके कदक निन्द करने  
के—शराबपिए-केर चक नहीं है।



## ब्रह्मदेव्य

अधिक सम्मानना इसी बातकी है कि आपने केवल ईश्वरकी वाणी अर्थात् वेदका ही अभ्यास किया हो, मनुष्यकी वाणीका अभ्यास न किया हो, और यदि यह सच है तो आपने न ज्योतिष या तन्त्र पढ़ा होगा और न अंगरेजी सेनागणित। तो, आपका त्रिकोणसे परिचय भी नहीं हो सकता। पर, यह निश्चित है कि आपके पुत्र या पौत्र त्रिकोणसे अवश्य परिचित हैं—उन्होंने उनका त्रिकोण देखे होंगे। अतः यह कहानी उन्हींके लिए है।

त्रिकोण-शास्त्रका नियम है कि त्रिकोणकी दो भुजाएँ मिलकर तीसरी से बड़ी होती हैं। तो, ग, द, ह\* नामक एक त्रिकोण है। उसकी ग द तथा द ह नामक भुजाएँ मिलकर तीसरी भुजा ग ह से बड़ी हैं। सुविधाके लिए हम इन भुजाओंका सहज नाम रख लेते हैं। ग द को 'रंग' कहिये—रंग को 'कुँची' और ग ह को 'रमाकांत'। अब यह बात हुई कि रंग और कुँची मिलकर रमाकान्तसे बड़ी हैं। तुर्भाण्य या सौभाग्यसे रमाकान्त नामक एक शास्त्री भी है और वे रंग और कुँचीके बिना अधूर हैं—वर्थात् निश्चाय हैं। इसलिए रंग और कुँची मिलकर रमाकान्तसे बड़ी हैं। उन्हींसे उनका परिचय दिया जा सकता है और उन्हींसे उनका पेट भरता है।



एक बात और कह दी जाय कि रमाकान्त काशीके निवासी हैं और प्रवासी भी वे काशीमें ही होते हैं । इस बातको समझाना होगा । रमाकांतके काशीमें तीन स्थानोंमें तोन मकान हैं । वे बारी-बारीसे उनमें रहते हैं ।

रमाकान्त चित्रकार हैं तो क्या, आदमी बहुत अच्छे हैं । उनसे बातचीत करनेका अर्थ है, ऐसी-ऐसी बातें सीखना; जो न किसी दैनिकमें छपती हैं, न साप्ताहिकमें ।

रमाकान्त अधिक पढ़े-लिखे आदमियोंसे बहुत नाराज रहते हैं । उनका कहना है कि ऐसे आदमी अपने लिए भी भार ही हैं, क्योंकि उनकी विद्या उनके काम नहीं आती, उससे दूसरे ही लाभ उठा सकते हैं । जो चीज अपनी हो, वह दूसरेके काम आये; वह रमाकान्तको पसन्द नहीं । उनके घरमें एक नीमका पेड़ है, उसपर गुरुच था । उन्होंने उसे हालहीमें कटवा दिया; कारण, गुरुच उनके काम न आती थी, उसमें भांगने और खोना आया करते थे ।

प्रातःकाल ९ बजा था । रमाकान्तने चाय पीकर गिलास एक ओर रखा । (चाय वे रोज पीते हैं । उसका नुस्खा यह है—बादाम १ छत्रौक, सोंफ ॥ की, सुनका लाल १५, केसर ॥ की, पीपल १ (जाड़ेमें), आदी १ टुकड़ा (जाड़ेमें), ब्राह्मी ६ पत्ती (गर्मीमें), चाय ६ पत्ती, गुड़ आब-च्यकतागुमार, काली मिर्च ३१ दाना, जल ३ सेर, दूध १ ३ पाव, और और ४ पत्ती; गर्मीमें हीजी चाय पीते हैं, जाड़ेमें गरम । ) उनके बाते-पानमें मत्त गुड़ के कटनेने हार्मोनियम केर धुप-रक्षा कायला पारस-का । जिनसे प्रकाशमें संभाव है, उनमें गुड़ उनसे तबसे प्राप्तकत, काम-कत उपलब्ध है; पर न जाने हैं दर्शकों । वे अपने लिए नहीं माने, मोहके-कालके विप्र माने हैं । वे किरीसे नाराज होते हैं तो कहते हैं कि वे तुमको

ध्रुपद सुना दूँगा, और प्रसन्न होते हैं तो ध्रुपद न सुनानेका आश्वासन देते हैं । उनके परिचित इस आश्वासनका पूर्ण महत्त्व समझते हैं ।

ध्रुपद गानेके बाद उन्होंने दोपहरलौघ और अंगोछा उद्यानाचार बाहर निकले । वे अब नहाने जा रहे थे—गंगाजी ।

रमाकान्तका भक्तान जिस गलीमें था, वह किसी प्रेमीने बनवायी थी, यह उनका विश्वास था; कारण, एक दूसरेसे टकराये बिना दो आदमी एक दूसरेके पाससे न निकल सकते थे । वह गली प्रेमियोंके बड़े कामकी थी भी । वे उसमें खड़े होकर चाहे जितनी देर निश्चिन्त होकर बातें कर सकते थे—उनके किसी परिचितके वहाँ आनेकी आशङ्का न थी । रमाकान्तने अपनी निश्चिन्तोंके कई जगह छोटे-छोटे छेद कर दिये थे और किसी प्रेमी जाह्निक आ जाता वहाँ उन्हींमें आँसू लगाकर चुपचाप खड़े रहते थे । व चित्रकार थे अतः सब प्रकारके दृश्य देखना उनका धर्म था । उस गलीको कुछ सौँडों और कुत्तोंने पहचान लिया था और वे दोपहर और रातको वहाँ सोनेके लिए आ जाया करते थे । दो-चार दिनों तो रमाकान्तने इस बातकी उपेक्षा की, इसके बाद वे नियमपूर्वक एक ढण्डा लेकर उन्हें खदेड़ आने लगे क्योंकि उनके विचारमें ये जीव प्रेमियोंको उनके माता-पितासे भी अधिक नाश्ता पहुँचाते थे ।

तो, आज भी वे नहाने गये । वे बहुत धीरे-धीरे, नपी-गुली चालसे चढ़ रहे थे; जैसे आपिसोमें कूकोंका वेतन बढ़ा करता है । वे अपने अभूत चित्रके चारों ओर चले थे । चित्र किसी स्त्रीका था, यह तो कहना ही व्यर्थ है । रमाकान्त इस चित्रको प्रारम्भ करके बड़ी निपत्तियोंमें पड़ गये थे क्योंकि वे चाहते थे कि उस स्त्रीके मुखपर और अंगोंमें वे बातें आ जायें जो पौराणिक सुन्दरी गङ्गा आदि स्त्रियोंमें मिलकर थीं और आँसुओंमें वह बात पैदा हो जाय, जिसे किसी स्त्रीमें पैदाकर आदराने

झट बन्दर होकर सन्तरेके पेड़पर चढ़ जाता है और सन्तरे तोड़-तोड़कर उस स्त्रीको खिलाने लगता है। रमाकान्त चाहते थे कि उसमें जीवन इस तरह दूरसे दिखायी पड़े, जैसे कालेजोंके लड़कोंके कोटके छेदमें गुलाबका फूल दिखायी देता है।

रमाकान्तको ऐसा चित्र बनाना असम्भव मालूम हुआ और तत्क्षण उन्हें आत्महत्याकी बात सूझी। उस समय वे पुलिस-चौकीके पास थे। वे अपने कामोंमें इतनी बार असफल हो चुके थे कि उन्हें विश्वास हो गया कि आत्महत्याका प्रयत्न भी असफल रहेगा और तब मैं इसी चौकीमें बन्द कर दिया जाऊँगा। उन्हें यह बात नापसन्द हुई कि अपनी हत्या करनेवाले उन लोगोंके साथ बन्द किये जायँ जो दूसरोंकी हत्या करना चाहते हैं। अतः उन्होंने आत्महत्याका विचार जबतकके लिए स्थगित कर दिया, जबतक सरकार आत्महत्या करनेवालोंके लिए कोई स्वतन्त्र स्थान न बना दे। उन्होंने घृणासे उस चौकीकी ओर देखा और आगे बढ़े।

अब वे सड़कपर थे। वहाँ उन्हें आत्महत्यामें अधिक आनन्दप्रद बातें दिखायी पड़ीं। एक गजन इस आनन्दपर जगत्क देवताके तरह नाचे जा रहे थे। अन्तमें उनके पीछोंमें विगरेट दृश हुआ था; उनके एक शरीरमें शौकीकी पीट ना. दूरमें पालाचा बंग, जिसे वे कटवा लिया रहे थे। वे ऐसा ही अकड़कर मर रहे थे, जैसे उन कुत्तेके बल्लेकी नक्काशना दे, जिसके एक नुम और निकल आवे। पानकी भूकणपर गोन्दरके एक शौकीका टुकड़ा बँट था। (शौकीसे ताजर्ष 'असे-जोअसे' है) वे विगरेट दर्पक न थे क्योंकि न वे किसी स्त्रीपर पीट्टी आनन्द नुम रहे थे, न किसीके पीछे लगना कर देना आनेके लिए किसीको पीवा रहे थे। ... एक विधोमें एक आरामी रहता। उनमें

रिक्शोवालेको एक चवन्नी दी। रिक्शोवालेने कहा—‘हुजूर, कुल और रीजिए।’ तब उस आदमीने रिक्शोवालेकी हथेलीपरसे चवन्नी उठा ली और एक रुपया रखकर चलता बना। रमाकान्तने उस आदमीको तबतक देखा, जबतक वह दिखायी पड़ता रहा। उनके मतसे इस तरहका काम बही कर सकता है जो अति उदार हो और उदारता तभी हो सकती है जब दिल फैल जाय और दिलको फैलानेवाली दो ही चीजें हैं—प्रेम और शराब।

दशाश्वमेधके चित्तरञ्जन-पार्कके पास चित्तरञ्जनजीकी मूर्तिके एक-दम पास, बीच सड़कपर, दिन-दहाड़े, दम्पतियोंमें मिनटोंमें प्रेम उगम करनेके तेल विक्रे रहे थे। विक्रेताको घेरे बहुतसे लोग खड़े थे और कुछ अमेरिकन सिपाही उन तेलोंकी शीशियाँ जेबोंमें भर रहे थे।

जरा आगे तीन आदमी जड़ी-शूटियाँ बिलग्ये बैठे थे। वे चिह्ला रहे थे—कण्टमालाकी जड़ी दो आना, शॉपकी जड़ी सवा पाँच आना, हक्वा-डक्वा तीन आना, लुटा दिया, लुटा दिया; इस शहरमें सिर्फ १५ दिन।

कालीजीकी तरफसे जो रास्ता गङ्गाजीकी ओर गया है, उसीसे होकर रमाकान्त उस जगह पहुँचे जहाँसे सीढ़ियाँ शुरू हो गयी हैं। वे सबसे ऊपरकी सीढ़ीपर खड़े होकर सामने देखने लगे—जैसे भूमि और आकाशके कुशल-मङ्गलकी जाँच कर रहे हों। तब उनकी दृष्टि नीचा पड़ी। कलसे आज चार हाथ पानी बढ़ चुका था। यानी कलसे आज तक बू रहा था, उससे २०-३० हाथ इधर ही नौवें तकनी शॉ और बुने हुएने पानीमें होकर लोग आ जा रहे थे। पानीसे १५-२० हाथ ऊपर टेकोदारकी झोपड़ी थी।

रमाकान्तके हाथ पानीपर होती हुई तब पार जाने लगे। पानी मेंतर था, उसपर पन था और छोटी-मोटी लकड़ियाँ, तिनके, धार

बहा जा रहा था—कहीं अलग, कहीं २-४ हाथकी लम्बाईमें। कहीं-कहीं नावें थीं जिन्हें माझी रामनगरकी ओर पीठ करके अर्थात् बहावकी ओर मुँह करके खे रहे थे।

शीतलाजीके मन्दिरकी पर्दापर आज पानी था—रमाकान्तने कुछ सीढ़ियाँ नीचे उतरकर देखा। घाटिये अपने तरुते ऊपर छाते जा रहे थे। एक तरुता प्रायः पूरा पानीमें था। बायें हाथके ऊँचे शिवालैकी दीवारसे टकराकर पानी घूमता था और शीतलाजीके चबूतरसे टकराकर फिर घूमता था—पानीका उतनी दूरमें एक आवर्त्त हो गया था। उस आवर्त्तमें कुछ लकड़ियाँ थीं और दो शव थे। वे, दोनों दीवारोंके पासतक जाते थे और तब पानी उन्हें जैसे पीछे ढकेल देता था। वे गोता खाकर कुछ देरके लिए अदृश्य हो जाते थे और तब फिर इधर आ जाते थे।

पानीमें एक तरुतेके होनेकी बात कही जा चुकी है, उसके तीन कोनपर तीन व्यक्ति खड़े थे। रमाकान्तकी दृष्टिमें ये तीनों वृत्तहीन थे, पर हम उन्हें वृत्त-सृष्ट माननेको बाध्य हैं क्योंकि रेखागणितका सिद्धान्त है कि यदि तीन बिन्दु एक ही सीधी रेखापर न हों तो एक (केवल एक) वृत्तसे अवश्य सृष्ट होंगे।

रमाकान्तने एक तरुतेपर अपना टोपीपर लोटा रखा, अँगोला कमर-में बाँधा और पानीमें उतर पड़े। कमर-भर पानीमें एक बंगाली बावू तना रहे थे। उन्होंने रमाकान्तको देखते ही कहा—'भोमोदकार मोशार्ड, नारायणकार। एहरे ये आप तबना देवता हाग-र देवता तबकी चोतुकेना का आर पड़े मोथा।'

रमाकान्त राज भगवत्कार, नृत्यकार जननी और पीठ करके लड़े होते थे और 'भगवत्कार' कर्तुकर, शक्तिव्य होकर नवाने लग जाते थे। रमाकान्त अपना इतना मूक बनाने समझते थे कि उस तो जोसारे जौका जय;

बंगाली बाबूवा एक ही आँखसे वह काम करना उन्हें असह्य था। पर आज वे बड़े प्रेमसे बंगाली बाबूके पास जाकर खड़े हुए और बहुत विनयपूर्वक नमस्कार करके कहा (उस तरह नमस्कार करना चौदहवीं सदीके व्यक्तिके लिए भी प्रशंसाकी बात होती) — मुझे तो चतुष्कोणकी बात कभी भूलती ही नहीं। मैं स्कूलमें पढ़ता था, त्रिकोण पार करके चतुष्कोणमें परिचय हुआ था, वस तभी निकाल दिया गया।

बंगाली बाबूने शाब्द पूछा — क्या है ?

रमाका तने उस-पार देखते हुए कहा — हमलोगोंको रेखागणित स्वयं हेडमास्टर पढ़ाते थे। वे बायीं आँखसे ही दुनिया देखते थे। एक दिन उन्होंने मुझसे एक चतुष्कोण बनानेको कहा जिसकी चार भुजाएँ और एक कोण ज्ञात हों। मैंने चतुष्कोण बनाया और उसका नामकरण किया — क, न, स, ल। वस, हेडमास्टर साहब आग-बचूथ हो गये और चिल्लाने लगे — 'हमको काना साला कहता है ! काना साला, ऐं !' उसके बाद उन्होंने मुझे निकाल दिया। लेकिन मेरा...

बंगाली बाबूने गर्भीर भावसे नाक दबाकर प्राणायाम शुरू कर दिया और आँख बन्द कर ली। धर्ममें प्रवृत्त मनुष्यका ध्यान भंग करना अधर्म समझ, रमाकान्त वहाँ चले आये, जहाँ तीन वृत्तहीन खड़े थे।

इन वृत्तहीनोंके नाम थे — सुन्दरगुरु, शंकरजी और सुदामा। शंकरजी और सुदामाके तख्ते ऊपर चले गये थे। यह तख्ता सुन्नू गुरुका था। उनकी उम्र ५५ के कुछ ऊपर थी, मुँहमें दाँत न थे, पर जीभ थी जो बड़े-छोटे, टेढ़े-सीधे, गली शब्दोंपर गामान् भावसे लोटा करती थी। पितृपक्षमें तर्पण करानेमें उनकी प्रसक्ति थी। वे एक साँसमें कहते थे — 'हाँ, जल पेकी। गाना तड़पता, वाश तड़पता, पिला तड़पता।' सुन्नू गुरुकी याद था कि हमारे किस तड़पानेका योग

रिश्तेदार 'तड़पन्ताम' का अधिकारी हो चुका है और इसी गुणके कारण उनके यजमान उनसे प्रसन्न रहते थे, क्योंकि उन्हें जल देते समय अपने स्वर्गीय नाना आदिके नामोंवाली डायरी न खनी पड़ती थी।

शङ्करजीने कहा—का हो रमाकान्त, जरा उस कोनेपर जाओ तो !

रमाकान्त चौथे कोनेपर चले गये और उसे पकड़कर कहा—  
उठें यारो !

मुदामाने खड़े ही रहकर कहा—समहालके ! नीचे जाचा हैं ।

रमाकान्तने इधर-उधर देखा; तब कहा—क्या ? कहाँ जाचा हैं ?

मुदामाने कहा—इसी तखतके नीचे हैं । तुम्हारे चाचा नहीं  
( आवसतके शवोंकी ओर दिखाकर ) इनके चाचा !

रमाकान्तने पूछा—इनके चाचा ? कह क्या रहे हो ?

मुदामाने जवाब दिया—आपके चाचाके साथ आये थे । इनके चाचा  
तखतके नीचे छिपे हैं । भलीभाँति खोज रहे हैं ।

रमाकान्त चौककर पीछे हटा और रुद्धा एक गढ़में चला गया ।  
उसकी पश्चिमी दीवार ऊपर रह गया—पानीके । वह तैरकर  
मुदामाने पास आया ।

मुदामाने कहा—अरे शङ्करबा ! बेकारकी दिल्दगी कर रहा है !  
उठाओ रमाकान्त, उठाओ ।

चार आश्रमियोंने नम्रता उदासा, जो पत्थरोंके बड़े-बड़े टुकड़ोंके  
पर्योपर रचा था । रमाकान्त आगे बढ़ा तो मुदामाने कोई चीज उकराती ।  
एक टुकड़कर आगे बढ़ा, बाकिने चारों भी हटा, पर वह चीज मुदामाने  
बाड़ी ही रही ।

रमाकान्तने कुछ दौकर कहा—देखो, वह पहलवाँ अच्छी नहीं है ।  
कोई चीज अटका रखी है शकंभर, और तखत उठानेकी कहेते हो !



सुदामाने कहा—अगर आँखें बन्द करके, उसे खींचकर धाटपर ले जाओ तो दस रुपया इनाम ।

रमाकान्तने कहा—जाओ, जाओ !

धुन्नू गुरुने कहा—हमारा जिम्मा रमाकान्त ! यह न देगा तो हम देंगे ।

रमाकान्तने कहा—अच्छा तो लो !

रमाकान्त आँखें बन्द करके झुका, भीतर हाथ डालकर उस बन्तुको पकड़ा और खींच-खींचना, अन्दाजसे, बाहर निकाला ।

सुदामाने कहा—आवाज ! हाँ, दहिनेसे बढ़ो ।

रमाकान्तको अब वह हलकी मालूम हुई । वह उसे टकैलते हुए आगे बढ़े, किनारेपर ल्यकर छोड़ दिया और आँखें खोलीं ।

आँखें खोलते ही रमाकान्त चौककर २-३ हाथ पीछे हट गये । सामने एक ताजा शय था । शयका पेट बहुत फूला हुआ था, सारा शरीर कुछ फूल गया था, मुँह खुला हुआ था, शरीरका रङ्ग जलके कारण अस्वाभाविक श्वेत हो चला था और हाथोंकी उँगलियाँ एंटी हुई थीं ।

धुन्नू गुरुने कहा—इस शयका तर्की देंगे । यह क्या निकाल लिये ?

रमाकान्तने कहा—कुपडेमा अत्यन्त नीच हो, कुलाङ्कार !

धुन्नू गुरुने कहा—जल छोड़ बैठो ! चाचा तद्गपन्ताम् ।

सुदामा बोले—कहा नहीं था चान्च हैं ! बिराडते क्या हो !

सुदामाने कहा—है बराबर ! रंगमें जनेऊ है ।

धुन्नू गुरुने कहा—भरा है स्वा-पीक । पेट केतना फूला है । मालगुआ भरा छोड़ें !

रमाकान्त कुछ देर चुप खड़े रहे । तब शयको पानीमें बाहरकी

और ढकेला और पानीको हिलोरकर, उसे आगे बढ़ाने लगे । शव आवर्तमें जा पड़ा और अन्य दो शवोंके साथ चक्कर खाने लगा ।

रमाकान्त किनारेकी एक 'भौलिया' पर चढ़े, उसमेंसे एक बहुत लम्बी, मोटी, रस्सी निकाली और उसे गलहीमें बाँधकर पानीमें छोड़ दिया । अब वे किल्लेवारीपर<sup>१</sup> पैर रखकर पानीमें उतरे और रस्सी पकड़कर आगे तैर चले । पानी उन्हें शिवालेकी दीवारकी ओर ले चला । वे दीवारपर एक पैर अड़ाकर रुके और प्रतीआ करने लगे । थोड़ी देरमें शव उतूकी ओर आये और उन्होंने एकका हाथ पकड़ा, जोर लगाकर उसे बाहरकी ओर खींचा और दीवारके सहारे आगे बढ़ने लगे । दीवारकी समाप्तिके पास आकर उन्होंने शवको और बाहर ढकेला और गत आनन्दके बाहर होकर गीधा आगे बढ़ गया— उपरि दिक्की दिशामें । सभी प्रकार उन्होंने जोग दो शवोंको भी आनन्दके बाहर कर दिया ।

घाटके ऊपरकी गीदड़पंजर कुछ खड़ी खड़ी, नर किन्ना देख रही थी । यदि रमाकान्त पंखेवर ( प्रोफेशनल ) प्रेमी हात तो उन्हें उनकी दृष्टियोंमें न-जा क्या-क्या भाव दृष्टिगोचर होते, और उन्हें न-जाने क्या करनेको प्रेरित करते ।

अब रमाकान्त किन्नारे आये, रस्ती खोलकर बथास्थान रस्ती और कमरभर पानीमें आकर खड़े हुए । उन्होंने शुककर पैरोंके नीचेसे मिट्टी उखाड़ी और शरीर मालने लगे । तीनों तनहीन राजा उभारकर रखनेमें व्यस्त थे । रमाकान्त गीते लगाते लगे । पक्षियों गीते रजामनेके बाद उन्हें जग प्रारम्भ किया । तनहीन उनके गिर और पोछकर गिराकी शान्तियोंके निश्चानप्राप्ति करते लगे ।

१--बड़ी, उत्तमर नाव । २--नावका किन्ना दिक्का ।

३--नावकी दिशा बदलनेका नाघन ।

सहस्रा रमाकान्त उल्लूककर पीछे दौड़े। वे हाथोंसे पानीको पीटते जाते थे। वे पानीसे निकलकर ऊपर दौड़े, सुदामाको पकड़कर वे पानीमें खींच ले गये और उसे दबोचकर, उसके ऊपर चढ़ बैठे। सुदामा छटपटाने लगा, उसका दम बन्द होने लगा। रमाकान्तने उसे छोड़ा और दोनों हाथ कन्धोंकी सीधमें फैलाकर, आँखें फाड़कर, एक पैर पानीसे ऊपर उठाकर, बहुत जोरसे चिह्लाये—ब्रह्मदैत्यसे छेड़खानी ! हड्डियोंका सत खींच लूँगा ! कच्चा चवा जाऊँगा !

सुदामाका मुँह खुला हुआ था। उसका एक हाथ सीनेपर था, एक रमाकान्तको रोकनेके लिए आगे बढ़ा हुआ ; उसकी आँखोंमें भय था। वह काँप रहा था और उसके पैर पीछे हटते जा रहे थे। रमाकान्तने उल्लूककर उसका हाथ पकड़ा और उसके गलेपर दाँत जमाये। सुदामा सिकुड़ गया, उसकी आँखें फैल गयीं, उसके मुँहसे निकलने लगा—  
र-र-र-र- च्छा छा छा व-व-व रम मम मम वा वा वा वा वा !

सुन्न गुरु और शङ्करके रोएँ खड़े हो गये थे। वे वहाँसे हाथ जोड़कर कहने लगे—कसूर भयल बाबा ! हा-हा हाथ जोड़ते है; छो-छोड़ दीजिये। पू-पूजा देंगे।

भूत-प्रेतोंकी बात रिक्योंकी गमगममें बहुत जल्द आ जाती है। ऊपर जो स्त्रियाँ खड़ी थीं, वे काँपती हुई वहाँसे चल दीं।

रमाकान्तने सुदामाको छोड़ दिया, कहा—जानता नहीं ! बाँसबरोलीका नरक है ! ककड़ीकी तरह सिर तोड़ देँगा अगर पूजा न की। धरुनपरसे गडक देँगा। हूँ ! हा ! है !!

रमाकान्त शरकेते पानीसे निकले। तीनों तृत्तदीन शिकुड़कर लगे हो गये। रमाकान्तने तीनोंको छूड़ व्याकवे देखा और अक्षरमान् दुस्

गुरुके गलेपर सटीक तमाचा मारा, कहा—‘चाचा तड़पनाम्’ करता था ! बंसका नास कर दूँगा ।

इसके बाद रमाकान्त लम्बे-लम्बे डग रखते हुए सीढ़ियाँ चढ़ने लगे और कुछ ही क्षणोंमें खड़कपर आ गये ।

× × × ×

जिस पानकी दूकानपर सौन्दर्यके एक शौकीन दर्शकके बैठे रहनेकी बात कही जा चुकी है, उसीपर तीन-चार व्यक्ति खड़े थे । इनमेंसे हरीभाऊ ऐसे व्यक्ति हैं जो तीन घण्टे सुबह और तीन घण्टे शामको, इस पानकी दूकानके आसपास ही रहते हैं और जब उनका कोई परिचित पान खाने आ जाता है तो वे भी वहाँ आ जाते हैं और अपने परिचितपर अनुग्रहकर, उसके दिये पान खा लेंते हैं । पानवालेने भी अपने प्रत्येक ग्राहकको अधिक-से-अधिक देरमें पान देनेका नियम कर रखा है, जिसमें उतनी देरमें उधरसे आने-जानेवाले प्रत्येक परिचितको वह बुलाकर अपने परिचयका प्रमाण दे सके ।

ठाकुर साहबके हाथसे पान लेकर हरीभाऊने कहा—कुछ सुना ! कण्ठालेपर ब्रह्मदैत्य आ गया है !

ठाकुर साहबने पूछा—कौन कण्ठाले ?

राम भाऊने कहा—बड़ी अपना रमाकान्त ! जो तखीर बनाता है ।

कुटीचर कम्पनीके मासिक मन्वयान विषय यह सुनकर कुछ शक्तिन हुए ! उन्होंने रमाकान्तको कुछ खूब बतानेके लिए १७) मन्वयान दे खेले । उन्होंने पूछा—ब्रह्मदैत्य कैसा ?

हरीभाऊने बतायना शुरू किया—ब्रह्मदैत्य सदासे भयानक था । एक सुदी वहाँ था । उसीको बहोते डिलकर चूमे, भाषण करता दिना । वह,

ब्रह्मदैत्य चढ़ गया। तीन दिनोंसे बुखारमें पड़ा है। चलो देख आवें।  
आ हा हा ! आइये, आइये !

जिसका इस प्रकार स्वागत हरीभाऊने किया था, वह पानकी दूकान-  
पर ही आ रहा था, पर हरीभाऊको देखकर वह न आया ; किसी  
जरूरी कामसे चला गया।

ठाकुर आह्वाने आसमानकी ओर देखा और कुटीचर कम्पनीके  
मालिकसे कहा—गर्नी बरगनवाला है। चलो, रमाकान्तको देख आवें।

कुटीचर कम्पनीके मालिक भी उत्सुक ही थे। वे निश्चय कर लेना  
चाहते थे कि १७) पानीमें रावे या कुछ आशा है।

रमाकान्त एक खाटपर लेटे हुए थे। चटार्हपर ३-४ आदमी बैठे  
थे। वे लोग भी बैठे।

एक व्यक्ति रमाकान्तको ध्यानसे देख रहा था। वह लुंगी पहने था  
और लाल रंगकी दाढ़ीपर हाथ फेर रहा था।

रमाकान्तने करवट ली और कहा—अबे मौलवीके बच्चे, तेरा  
दारा भंगर-जवर निगाल दूँगा।

मौलवी वाहदने दो-तीन बार रमाकान्तकी ओर फूँक मारी और  
कहा—बड़े-बड़े बरमराकसोंको दोजखकी हवा खिला चुका हूँ। हाँडीमें  
चन्द करके पारमें गाड़ आऊँगा। तुम आये क्यों हो ?

रमाकान्तने कहा—मुझे क्या पड़ी थी आनेकी !

मौलवी—तब क्यों आये ?

रमाकान्त—मैं तो सैरको निकला था। भजेमें मुदंपर बैठा जा रहा  
था ! लहरोंपर लेट रहा था। इसीने मुझे छेड़ा। जवरन वहाँसे हटाया।  
तो मैं हरीपर चला आया।

मौलवी—तुम जाओगे कब ?

रमा०—जब मेरी इच्छा होगी । अरे हाँ आँ,

तेरा चलाई तब रावणने अन्धा तीन लोक होइ जाय,

अङ्गदजुको मिरगी आई बनरा चले पराय पराय ।

हाँ, हाँ, धागे न धिनक धिन, धागे न धिनक धिन ।

मौलवी साहबने पूछा—पहले आरुहा गाते थे क्या ?

रमाकान्त ताल देते रहे । बोले नहीं ।

मौलवीने डपटकर कहा—मैं क्या पूछता हूँ !

रमाकान्तने कहा—चुप सुअर !

मौलवीने कहा—तोवा ! तोवा ! थू ! विरहमन लोग मरकर कितने  
बुरे हो जाते हैं !

कुछ देर बाद रमाकान्तने कहा—अब मैं जा रहा हूँ । रेवड़ी-  
तालाबपर ताड़के पेड़पर जरा बैठूँगा ।

रमाकान्तने सिरहानेकी पाटीमें सिर लगाया, पैतानेकी पाटीमें पैर  
अड़ाये, धड़को अनुपाकर ऊपर उठाया और तब ऊपरसे गिर पड़ा  
और शिथिल हो गया । उसकी आँखें बन्द हो गयीं और वह सो गया ।

मौलवी साहबने फरमाया—भारी पाजी । .....  
देखिये, ऊँटके पैरकी हड्डी, बन्दरके दाँत और बिल्लीके सिरकी हड्डी  
चाहिए । उदरनिवाणका पिला, कौहवान, जाफरान, चार हाथ हग कपड़ा,  
तीन हॉडी, आठ लोहेकी गेख, तीन परई और केंचोंचकी सुकनी भी  
दरकार है । आवे-जमजम तीन सुँद चाहिए, वह मैं ले आऊँगा ।

रमाकान्तके शरीरने कण्ट—रानी चली आने ही लखनेगा । हिन्दू  
लोग दूँटुगो नहीं केवत ।

मौलवी साहबने कहा—अच्छी बात है, मैं ही ले आऊँगा । सुने  
सुने भी भिड़गो । तो २५) दिखाने ।

ठाकुर साहबने पूछा—इतनेसे यह झंझट दूर हो जायगी तो ?

मौलवी साहब—खुदाने चाहा तो सब ठीक हो जायगा ।

ठाकुर—क्यों मौलवी साहब ! लोग भरकर भूत-परत क्यों होते हैं ?

मौलवी—बन्दा जितने ज्यादा गुनाह करता है, उसकी रूह उतनी भारी होती जातो है । दुनियामें सब आफतें आसमानसे आती हैं । आसमानमें सात परतें हैं । रूह जिससे निकलकर ऊपर उठने लगती है । जब वह तीन परदे पार करके चौथेमें चली जाती है, तब तो ठीक रहता है; नहीं तो वह भूत-प्रेत बनकर उन्हीं तीन परतोंमें घूमती रहती है ।

मलखानने कहा—बिलकुल टी० वी० का हिसाब है । तीन परदे-पार और मुक्ति !

मौलवी—लेकिन भारी रूहें चौथे परदेमें नहीं जा सकतीं । उनमें जो जितनी ज्यादा गुनहगार होती हैं, वे उतनी ज्यादा शैतानी करती हैं । उसी हिसाबसे उनके नाम होते हैं, जैसे जिन, भूत, राकस, परेत ।

ठाकुर—मेरे ये दोस्त तिवारी साहब इन बातोंपर यकौन नहीं करते ।

मौलवी—यकौन तो भिन्नतामें कराया जा सकता है । मैं इनपर किसी भूतको बुलाता हूँ ।

ठाकुर—रमाकान्तके ब्रह्मदेवको इनपर बुलाइये ।

मौलवी—वह तो अभी ताड़के पेड़पर है । फिलहाल दूसरा ही सही ।

इसी वक्त रमाकान्त उठलकर उठ बैठे । बोले—मैं आ गया । ले चढ़ा मुझे तिवारीपर !

तिवारीने कहा—देखिये बरम्हदैत्यजी ! मेरी रमाका तसे दोस्ती है, आपसे नहीं । आप मुझसे दूर ही रहिये ।

ब्रह्मदैत्यने कहा—दोस्ती क्या है ! तू रुपया देता है, काम कराता है । तेरे १७) वाकी हैं न अभी !

तिवारीने अब मान लिया कि ब्रह्मदैत्य है । उन्होंने श्रद्धासे नमस्कार करके कहा—महाराज ! आप खुली जगहके रहनेवाले हैं; कभी ताड़के पेड़पर बैठे, कभी बाँसकी कुनगीपर; अभी कलकत्ते हैं तो मिनटभरमें बम्बई; आपको रमाका गतका यह महा गन्दा घर सुहाता कैसे है ? आप तो किसी मन्दिरकी पताकापर बिराजिये—ऐसे मन्दिरकी पताकापर, जिसमें ऐसे प्रेमी एक दूसरेका दर्शन करने आते हों जिन्हें और कहीं अवसर न मिलता हो । आपने प्रेम तो अवश्य किया होगा !

ब्रह्मदैत्यने एक लम्बी साँस खींचकर कहा—प्रेमहीके कारण तो मैं ब्रह्मदैत्य हुआ हूँ । पर, वह लम्बी कहानी है । उस वक्त तुम्हारे प्रपितामह भी पैदा नहीं हुए थे । सारांश यह कि 'उसके' विद्वेदापाने मुझे ब्रह्मदैत्य बना दिया—मुझे काटकर फेंक दिया । उस समय न पुलिन था, न बंधरमें विभीषण थे । उस समय ऐसे काम करना धर्म समझा जाता था ।

तिवारीने पूछा—प्रोग करना ?

ब्रह्मदैत्यने कहा—हाँ, प्रेमियोंकी ब्रह्मदैत्य बनाना । ब्रह्मदैत्य बनाने में एक बार 'उसके' पारा गया था । वह तो देखकर मुर्च्छित हो गयी । मुझे भी चिरन्त हो गयी । लौट आया ।

तिवारीने कहा—आप तो ऐसी करुण-कथा कह रहे हैं कि मुझसे रोना ना लगे जाता ।

ब्रह्मदैत्य बोले—जब वह भर गयी और कमरूत उस लोचर गले तो मैं गले-पीठे बन्ध । सोझा दूर जानेपर एक बन्धुत्तने ऐसा डब्बा गया कि



मेरी कमर टेढ़ी हो गयी । सोचो ! मेरे ही जातके और मुझे डण्डा मारें ?

तिवारीने पूछा—आपके जातके ! यमदूत !

ब्रह्मदैत्यजी हँसे, कहा—ब्राह्मण गीता पाठ करते-करते मोह-मुक्त हो जाते हैं—उनमें दया नहीं रह जाती । वे ही यमदूत बनाये जाते हैं । जिसमें जरा भी दया हो, वह यमदूत कैसे बनाया जा सकता है ?

तिवारी—भाग्यसे ही मैंने कभी गीता नहीं छुई । रमाकान्तके पिताको आपने देखा ?

ब्रह्मदैत्य—नहीं ।

तिवारी—कभी देख लीजियेगा । वे भी गीता-पाठी थे । तो, वास्तव यह है कि आप प्रेमका महत्व जानते हैं । रमाकान्तका हालहीमें विवाह हुआ है । ब्रह्म अपनी पत्नीसे प्रेम करता है । आप उसे छोड़ दीजिये ।

ब्रह्मदैत्य—इसी लिए तो मैं डटा हूँ । प्रेम बहुत दुर्लभ है । वह भी अपनी पत्नीमें ।

तिवारी—तो आप कबतक बिराजेंगे ?

ब्रह्मदैत्य—५-६ महीने । स्व-स्त्रीमें प्रेमकी अर्वाधि दो वर्षकी होती है ।

मौलवी—मैं अभी भगता हूँ । ५-६ महीनेकी ऐसी-तैसी ।

ब्रह्मदैत्य एकदम उठला । उसने मौलवी साहबकी दाढ़ी पकड़कर दिवानी झुलकी आर चिल्लाया—तू भगावेगा तू ! तू अभी चला जा नशं तो तेरे बगलकी शरून उमट देगा, अभी ।

तिवारीने प्रार्थना की—महाराज ! छोड़ दीजिये । इस शरीरके बच्चेको मारकर क्या मिलेगा !

ब्रह्मदैत्यने कहा—इसे अभी हटाओ यहाँसे ।

ठाकुर साहबने मौलवी साहबको उठाया और बाहर ले चले । वे

काँपते हुए धरसे निकल गये । उनकी आवाज कुछ देर सुन पड़ी—  
तोबा ! तोबा ! शैतान है शैतान ! इबलीस ! जान बची ।

तिवारीने कहा—महाराज एक प्रार्थना है ।

ब्रह्मदैत्यने कहा—कह !

तिवारी—एक तान्त्रिक हैं । ब्राह्मण हैं । बम्बईमें भूत-प्रेतोंका कारोबार  
था । लडाईकी भगदड़में बनारस चले आये हैं । उन्हें मैं लाना चाहता हूँ ।

ब्रह्मदैत्यने कहा—अब तू मूर्खताकी बात करने लगा । मैं भी  
ब्राह्मण हूँ, उसपर मरा हुआ । वह मेरा क्या करेगा ? गायत्री मैं जानता  
हूँ, जन्म-मन्त्र मैं जानता हूँ ।

तिवारीने कहा—गुरुजी ! लोहा ही लोहेको काटता है । आप आज्ञा  
दीजिये तो मैं उनको लाऊँ ।

ब्रह्मदैत्यने कहा—तू खुशासे ल । मैं तुझपर प्रसन्न हूँ ।

तिवारीने कहा—पर, मेरे घर शत पथाग्निवेगा ।

ब्रह्मदैत्य हँसे ; कहा—एवमस्तु ! पर, तूने यह प्रार्थना क्यों की !  
धनकी जरूरत नहीं है तुझे ? तेरे घरमें ६ लाख गड़े हुए हैं । पुछता  
तो मैं उन्हींका ठीक पता बता देता ।

तिवारीकी आँखें फैल गयीं । उसने गिड़गिड़ाकर कहा—महाराज !  
अब बता दीजिये ।

ब्रह्मदैत्य—तूने तो मुझे अपने घर जानेसे मना कर दिया !

तिवारीने आतुरतासे कहा—मैं एक बाँस अपने आँगनमें गड़वा  
देता हूँ । आप उसीपर निराग्निदे ! पौत्र प्राणकी पूजा किया करूँगा ।

ब्रह्मदैत्यने कहा—अब तूने मुझे चक गया । पर, चिन्ता क्या है ;  
मैं तो यहाँ ६ महीने रुजूगा । फिर कोई अनरर मिलेगा ।

तिवारी अपने ऊपर बड़े क्रुद्ध हुए । वे अब तान्त्रिकको न लाना

चाहते थे। उन्हें भय हो गया कि कहीं ६ हण्डोंका पता बतानेके पहले ही ब्रह्मदेव भी चले न जायें। पर, अब तान्त्रिकको न लानेसे रमाकान्तके घरवाले नाराज होंगे।

तिचारिने कहा—महाराज ! बिना बताये चले न जाइयेगा।

ब्रह्मदेवने कहा—तेरा प्रारब्ध !

\*

\*

\*

इन लोगोंके चले जानेके बाद ही लखनऊसे रमाकान्तके एक भाई आ पहुँचे। जिन लोगोंसे इनका परिचय था, उनमें ये प्रसिद्ध थे, क्योंकि ये पी० एच० डी० थे पर सिस्पर दो बिस्केकी चुटिया थी और 'अचाम कर्पाळय'का जूता पहनते थे। ये पहले 'सिविल सर्विस' में जानेवाले थे, पर विलयतमें इन्हें पता लगा कि सिविल सर्विसवालोंमें न सभ्यता होती है न सेवा-भाव। अतः इन्होंने वह परीक्षा इस हंगसेन्दी कि फेल हो गये और इसके बाद पी० एच० डी० करके चले आये। इन महाशयका नाम था—रघुनाथ।

रघुनाथ, पी० एच० डी० ने विज्ञानके पीछे अपना जीवन नष्ट किया था। ये योगशास्त्र, ज्योतिष और वैद्यकके भी प्रेमी थे और समन्वयवादी थे।

महाभारतमें अदितिके उदरमें ४९ पवनोंकी उत्पत्तिकी जो कथा है, उसे ये सत्य मानते थे। इनका कथन है कि अदितिका अर्ध है आकाश, क्योंकि उसीके उदरमें वायुकी उत्पत्ति हुई। मूढतः सात नाशु हैं। उनके और सात विभाग होनेपर ४९ हुए। इनका कहना है कि यस्ततः ३३० वायु हैं क्योंकि वैश्वानर वगणा गया है कि शरीरमें ३६० अदितियों हैं। सूर्य १२ राशियोंपर चरता है। एक राशिमें तीस दिन होते हैं और सूर्य जो अदितियोंका जन्मा है। तो सूर्य सब मिलाकर १२ राशियोंपर ३६० राशियोंका जन्मा है। अतः शरीरमें इतनी

अस्थियाँ और पवन होना उचित ही हैं। ये ही पवन जब किसी कारण शरीरमें अस्त-व्यस्त हो जाते हैं तो रोग उत्पन्न होते हैं। इसी कारण योगी लोग सूर्यकी उपासना करते हैं और प्राणायामके द्वारा वायुको वशमें करते हैं। इसका फल यह होता है कि हड्डियाँ पुष्ट रहती हैं, अतः वे दीर्घजीवी होते हैं और उन्हें कोई रोग नहीं होता।

रघुनाथजीको निश्चय था कि रमाकान्तके शरीरमें पवन अस्त-व्यस्त हो गये हैं और सम्भवतः खोपड़ीके भीतरके। अतः उन्होंने आते ही यह निश्चय करना चाहा कि रमाकान्तके ज्ञान-तन्तु अभी ठीक हैं या पवनोके आघातसे छिन्न-भिन्न हो गये हैं।

रघुनाथ रमाकान्तके पास आकर बैठे। रमाकान्तने कुशल-मङ्गल पूछा।

रघुनाथने पूछा—तुम्हारे पास कितने रंग हैं ?

उत्तर मिला—जितनी कूँचियाँ हैं।

प्रश्न—कितनी कूँचियाँ हैं ?

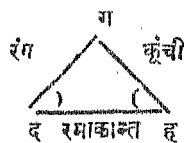
उत्तर—जितने रंग हैं।

प्रश्न—यदि एक रंग बढ़ जाय ?

उत्तर—तो एक कूँची खरीदी जायगी।

प्रश्न—तुम्हें रंगसे अधिक आमदनी होती है या कूँचीसे ?

निकोण-शास्त्रका एक विद्वान् यह है कि यदि किसी त्रिकोणकी दो भुजाएँ समान हों तो उसके तीनोंके दो कोण भी समान होंगे। यदि रमाकान्त इसे जानते तो सहजमें उत्तर दे देंगे। य, र, त, नामक त्रिकोणका उत्प्रेषण ही युक्त है। उसीका दूसरा नाम रंग, त्रेणो तथा अक्षरान्त है यह भी ध्यान में रूना है।



रंग=कूँची, और कोण ग द ह=कोण ग ह द, यह ज्ञात है। 'कोण' के स्थानपर 'आय' रखनेसे यह हुआ कि रंग और कूँची, दोनोंकी आय समान है।

'रमाकान्त' तो रंग और 'कूँची' दोनोंके लिए समान अर्थात् अन्यथासिद्ध हैं। अतः उन्हें छोड़ देना ही उचित है। इस प्रकार यही सिद्ध हुआ कि रंग और कूँचीके कारण समान आय है।

रमाकान्तने इसी बातको बहुत देरमें, बड़े कष्टसे और अशास्त्रीय ढंगसे खुमाथको समझाया। खुमाथने निश्चय किया कि शान-तन्तुओंपर पवनके धक्के लग रहे हैं, पर वे टूटे नहीं हैं। वे चिन्ता-मग्न हुए।

रमाकान्तने कहा—तुम पूरे पक्षम अन्यथासिद्ध हो।

खुमाथने बिना समझे ही पूछा—क्यों ?

रमाकान्त—क्योंकि तुम पवनोंके फेरमें पड़े हो। मेरे सिरमें पवन नहीं है क्योंकि वह टोस है, टकहिया हाँड़ी-जैसा बोलता है। तुम्हारी कोई नस जरूर खराब हो गयी है।

खुमाथ—क्यों ?

रमाकान्त—क्योंकि तुमको पवन, अग्नि, आदि उलटी-पलटी बातें सूझती हैं। वह मौलवी भी तुम-जैसा ही था। कहता था आसमानमें मात परदे हैं और उसीसे सब आगलियाँ आती हैं।

खुमाथने न्याककर कहा—सच ? कहता था ? वह रहता कहाँ है ? मैं उससे मिलूँगा।

रमाकान्त—क्यों

रघुनाथ—यह जो पञ्चतत्त्व हैं, उनमेंसे अग्नि-तत्त्व तो चारों युगोंमें एक-सा रहता है। सत्ययुगमें पृथ्वी-तत्त्वकी प्रधानता होती है। पृथ्वीसे और ब्राह्मणोंसे घनिष्ठ सम्बन्ध है। इसी कारण उस युगमें ब्राह्मणोंका अत्यन्त सम्मान था। त्रेतामें जल-तत्त्वकी प्रधानता होती है। जलका पृथ्वीसे घनिष्ठ सम्बन्ध है, अतः उस युगमें भी राजा और ब्राह्मण सम्मान ही रहते हैं। द्वापरमें वायुतत्त्व प्रधान होता है। वह पिछले दोनों तत्त्वोंसे असम्बन्ध है, अतः उपद्रव होते हैं। गत द्वापरमें महाभारत हुआ ही था। प्रत्यक्ष ही देख लो, आरतें, मजदूर, गधे-घोड़ेतक आसमानमें उड़ रहे हैं। सबके दिमाग आसमानमें हैं। जर्मनी और जापानको भी आकाशके ही बलपर जीता गया। यात्रा भी आकाशमार्गसे ही होगी। भूमिपर कुछ न रह जायगा और जिस दिन ऐसा होगा, उसी दिन प्रलय होगा। इसके बाद फिर पृथ्वीतत्त्वकी प्रधानता हो जायगी। मौलवी ठीक कहता था। इस युगमें सब निपटिगों आकाशके ही कारण हैं।

रमाकान्तने कहा—बनारसकी सड़कोंपर घूम आओ तो तुम्हें मादूम हो कि अब भी किस तत्त्वकी प्रधानता है। बनारसका दूध पियो तो तुम्हें गारम हो जाय कि यहाँ गङ्गाजलकी ही प्रधानता है।

रघुनाथने यह प्रश्न छोड़कर पूछा—तुम्हें ज्वर है ?

रमाकान्तने कहा—हाँ।

रघु०—हे नो।

रमा०—वह तो घेन स्थिर किन्ना तुम्हें है और ज्वरक जाइँगा, भेभा।

रघु०—तुम नचों स्थिर रहते हो ?

रमा०—वही, जेव खंदायका निरीक्षण कर रहा हूँ।

खुनाथको बात हुआ कि इस समय रमाकान्तकी खोपड़ीमें पवनका बंध हुआ है, अतः उसने चुप रहना ही उचित समझा ।

रात्रिकी तान्त्रिकजी पधारे । गर्दनतक केश, बीचोबीच भांग निकाली हुई, माथेपर लाल तिलक, छुङ्गी पहने, गलेमें और बाहोंपर १५-२० तार्यज ; वह उनका रूप था ।

तान्त्रिकजीने पूछा—कब ज्वर आया ?

उत्तर पानेपर वे उँगलियोंपर गिजने लगे—कृत्तिका, रोहिणी, भरणी, मण्डयोग, श्रवण । शनि-मङ्गलकी दृष्टि, व्यतीपात, वार—बैला—प्रचाण्ड वारके प्रारंभ ही । रात निगमें जायगा ।

रमान्तकी ओर उन्होंने स्थिर दृष्टिसे देखत देखा । रमाकान्तकी आँखें लाल थीं, शरीर काँप रहा था । तान्त्रिकजीने कहा—आवेश है । तान्त्रिकको बड़ा खतरा रहता है । एक बार एक लकवेके मरीजको देखने गया । उसके ग्रह अत्यन्त प्रबल थे । वह अच्छा हुआ, मैं बीमार पड़ा । पर, कोई हर्ज नहीं । मैं इसे दूर करूँगा ।

टाङ्कर साहबने कहा—तो क्लीनिये !

रमाकान्तने आँखें पाड़कर, दीग फेरकर कहा—मैं तेरी चौंटी उखाड़ लूँगा । तू क्या दूर करेगा ?

तान्त्रिकजीने एक बड़ी-सी हँडिया सामने रखी, उसमें जल भरा और तब उसमें आँधी, बुझा, धानका लावा, आध पाव देशी शराब, और रमान्तके नाड़ी लेकर २१) छोड़े । हँडियाका दो हाथ लम्बे कोरे कमड़ेसे ढकेरा और एक थालमें, पीमें तर पचासों बत्तियाँ जला दीं । इसके बाद उन्होंने कुछ अप किया और कुछ श्लोक पढ़े । तब उन्होंने एक जलती बत्ती उठायी, उस रमाकान्तके सिरके पास धुमाया और जोरसे हँडियामें पटक दिया । यही क्रम चला और जब १०-१५ बत्तियाँ रह गयीं

तो उन्होंने उन सबको एक साथ उठाया और रमाकान्तके सिरके पास बुभाकर अपने मुँहमें डाल लिया और उन्हें खा गये । तब वे रमाकान्तके माथेपर मंत्र पढ़कर फूँक मारने लगे । रमाकान्तने चटाकते उनके गालपर एक करारा चरत मारा । तान्त्रिकजी गाल सहलते पीछे हटे और रमाकान्तके भाईसे कहा—कल थोड़ी लाल मिर्च और एक रस्सी रखियेगा । इसे बाँधकर धूनी दूँगा । सात दिनोंमें मैं इसको भगा दूँगा ।

रमाकान्तके भाईने उन्हें ७।) दिये और वे हाँड़ी लेकर चले गये ।

उनके जानेके बाद दर्शकोंमें वातचीत होने लगी । जलती बत्तियाँ खानेपर सभी चकित थे ।

रातको सोने जानेके पहले रघुनाथने रमाकान्तके कमरेमें झाँका । रमाकान्तने उन्हें सङ्केतसे बुलाया । रघुनाथ पास गये ।

रमाकान्तने उनका हाथ पकड़कर पास बैठाया और कहा—मैं बाँस-बरेलीका ब्रह्मदैत्य हूँ, तुमको मालूम है ?

रघुनाथने भीत भावसे कहा—सुना है ।

ब्रह्मदैत्यने कहा—मैं ६ महीने रहूँगा । पर, तुम कहो तो कल ही मर जाऊँ !

रघुनाथने कहा—आपकी बड़ी कृपा है ।

ब्रह्मदैत्य बोले—तुम्हें एक काम करना होगा । कल जब तान्त्रिक जाड़े याताने आयेगा, तब मैं उसपर दूढ़ पड़ूँगा । तुम उसके हाथ पकड़ लेना और तब मैं कहूँ कि 'शुभ' मैं जाता हूँ' और फिर पढ़ूँ तब सातह लेना कि मैं गया । उसके बाद तब धूनी न देने देना क्योंकि मैं गो रहूँगा भई, तब तुम्हारे भाईको धोकर । और, खबरदार, यह सब किसीसे कहना नहीं ।

रघुनाथने शपथ ली !



दूसरे दिन हाँड़ीवाली प्रक्रिया करनेके समय रमाकान्त स्थिर भावसे सोया रहा। उसके बाद तान्त्रिकजी रस्सी लेकर रमाकान्तके हाँथ बाँधने बड़े। सहसा ब्रह्मदैत्य उठकर तान्त्रिकजीपर टूट पड़ा और इन्हें अन्धाधुन्ध मारने लगा। उसने तान्त्रिकजीके केश पकड़ लिये, झकझोरकर उन्हें गिरा दिया और लाल मुकोंकी वर्षा शुरू कर दी। रघुनाथ तान्त्रिकजीके हाथ कसकर पकड़े हुए था। तान्त्रिकजी चिल्ला रहे थे, ब्रह्मदैत्य उनसे भी ज्यादा चिल्ला रहा था—ब्राह्मणको टगने आया है ! ४९॥) मुझमें ले गया ! तेरा बाप भी तान्त्रिक था !

अन्तमें ब्रह्मदैत्यने उन्हें छोड़ दिया और हाँफता हुआ खाटपर जा बैठा। तान्त्रिकजीने छूटते ही ब्रह्मदैत्यके हाथ-पैर बाँध डाले और रघुनाथसे अत्यन्त क्रुद्ध होकर कहा—तुमने मेरे हाथ क्यों पकड़े ! जानते हो ब्रह्मदैत्यका गारा-ध लहरा, कहीं मेरा गला ही घोंट देता तो !

रघुनाथने अत्यन्त चकित होकर कहा—मैं तो रमाकान्तके हाथ पकड़े था।

तान्त्रिकजीने अविश्वास-भरी दृष्टिसे उन्हें देखते हुए कहा—मैं झूठ बोलता हूँ ! खैर।

तान्त्रिकजीने अँगूठीमें लाल मिर्च डाली और खाटके नीचे रखकर रमाकान्तका सिर पकड़कर उसपर छुकाया और मन्त्र पढ़ने लगे।

ब्रह्मदैत्य चिह्राने लगा—मैं जाता हूँ, मैं जाता हूँ।

और तब रमाकान्त स्थिर हो गया। रघुनाथने झपटकर अँगूठी उठा ली अँगूठीमें लाल मिर्च लगे उसे बाहर ले गये और उसपर एक लोटा गारा डाल दिया।

रघुनाथने कहा—ब्रह्मदैत्य तो गया।

तान्त्रिकजीने कहा—हाँ, अभी गया, फिर आ जायगा। अँगूठी

न उठाते तो मैं कबूल करा लेता कि फिर कभी न आवेगा। लीजिये, मैं जा रहा हूँ। अब ५००) लेकर ही आऊँगा।

तान्त्रिकजी जोरसे पैर पटकते हुए चले गये। हॉड़ी भी न ले गये।

थोड़ी देर बाद रमाकान्त उठ बैठे। उन्होंने अपना माथा दबाया, दर्शकोंकी ओर देखा और पूछा—मैं कहाँ हूँ ?

रघुनाथने कहा—घरमें।

तुम कब आये ?

कल।

रमाकान्त पुनः लेट गये और थोड़ो देरमें सो गये।

×

×

×

रातको ११ बजे रमाकान्तकी आँखें खुलीं। उन्होंने देखा—रघुनाथ पास ही बैठे हैं। रघुनाथ पास आये।

रमाकान्तने पूछा—सब लोग सोये हैं ?

हाँ।

थोड़ा दूध पिना सकते हो ?

हाँ।

दूध पीकर रमाकान्तने पूछा—तान्त्रिकको मजेकी चोट लगी कि नहीं ? मैं तो मारते-मारते थक गया था।

रघुनाथ उसकी ओर देखने लगे।

रमाकान्तने कहा—यह सब नाटक था। असली बात इतनी ही थी कि मुझे ज्वर आया था। मैंने उसे टका लिया।

रमाकान्तने रघुनाथकी तरफ़ एक झंसी झिंझकी।  
उसे रघुनाथके हाथमें लेकर कहा—मे कुनैवजी सोलियाँ हैं। जदो तुम्हार-  
में कुनैव स्थानो वह उतरका नहीं, नद तो जगनो ही होमे।

रघुनाथ चकित होकर देखने लगे ।

रमाकान्तने कहा—ब्रह्मदैत्यका नाटक अभी चलाता, पर इस तान्त्रिकने कल ही ९॥) ले लिये ! इस हिसाब से सात दिन भी लेता तो मेरा कितना रुपया निकल जाता ! पर मैंने भास खूब ! ९॥) को कसर निकाल ली ।

रघुनाथ ने कहा—तुम बहुत दुष्ट हो । लेकिन भाभी तों बहुत दिनों-तक भड़केंगी ।

रमाकान्त—उसकी चिन्ता मत करो । बूढ़ तो पी० एच-डी० भी नहीं है । अब एक काम करो । हाँडीमेंसे रुपये निकाल लो और हाँडी धीरेसे ले जाकर किसी मोहल्लेवालेके दरवाजेपर रख आओ ।

## ब्राह्मी-कल्प

फर्म घासीराम टनटनदास चमरियाका नाम आपने अवश्य सुना होगा । ये जगद्विख्यात व्यवसायी हैं । ये चीनमें चूहे भेजते हैं, जापानमें जिक आफ सलफेट भेजते हैं, अमेरिकामें अशोकारिष्टके पार्सल प्रेषित करते हैं, फ्रांसमें बन्दर भेजते हैं, इङ्गलैण्डमें आम भेजते हैं और अफ्रीकाको अचारसे पाटते हैं । तात्पर्य यह कि कोई देश या मनुष्य कोई चीज चाहे और फर्म घासीराम टनटनदास न दे सके, यह हो नहीं सकता । (१००) लगाकर (१२५) पा सकनेके सब व्यवसाय इस फर्मको पसन्द हैं ।

एक फर्मके संस्थापक श्रीमान घासीरामजी मरुभूमिके निवासी थे; अतः वे तीन बातें सम्भावितः महं सकते थे—प्यास, प्यास और गाली । तीन बातें स्वभावतः कर सकते थे—आँखोंमें धूल झाँकना, बालोंमेंसे पानी निकालना और लम्बी यात्रा । मरुभूमिके होनेके कारण तीन गुण उनमें और थे—वे मोटी-से-मोटी चीज खा सकते थे, पतली-से-पतली पी सकते थे और कम-से-कम कपड़ोंके काम लेते हुए, जमीनपर सो सकते थे । व्यवसायीमें ये ही गुण श्रेष्ठ चाहिये ।

अब यह पढ़नेवाले को पता पीले पड़ावेगं । इससे उन्हें कृतज्ञ ही होना चाहिये । फर्म घासीरामजी के नाम पर रहे हैं । एकादेशका सम्भावना पूर्ण ही देखना बुद्धिमानीकी बात है ।

उमने यह नहीं कृतवाना है कि ये घासीरामजी किस जैतकी मूर्ख थे—उनका नाम घासीरामसाँकी गोपड़ी एक सीमा ही था और व्यवसायियोंकी दृष्टिमें उनका जन्म एक सुखी-जितना भी नहीं था—वह आप

जानते ही होंगे, और न जानते हों तो किसी मन्दिरके फाटकपर खड़े हो जाइये । मन्दिर ऐसा हो जहाँ आपको अन्य किसीके जानेकी आशा न हो । वहाँ ध्यानसे देखनेसे आपको मालूम होगा कि मन्दिरकी किसी दीवारका कुछ पलस्तर नया है और फाटकके बगलकी दीवारमें सङ्गमरमरका एक चौकोर टुकड़ा दिखलायी पड़ेगा । उसपर यह खुदा होगा—

जीर्णोद्धार-संवत् .....  
 फर्म घासीराम ठनठनदास चमरिया  
 .....निवासी ।

घासीरामजीके वंशमें और भारतीय व्यवसायके इतिहासमें सन् १८६४ ख्रिस्मसखण्ड रहेगा । उसी वर्ष घासीरामजी घरसे निकले । उनके वंशके चारणोंने घासीरामजीकी उपमा राजा भगीरथसे दी है । हम उन्हें भगीरथसे भी बड़ा मानते हैं । वे अपनी लक्ष्मी-गङ्गा वहाँसे मरुभूमितक लाये, जहाँ भगीरथकी गङ्गा जाकर गिरी हैं और उन्होंने स्थान-स्थानपर बाँध भी बाँधे । उनके वंशज भगीरथके वंशजोंसे अधिक योग्य निकले । उन्होंने उनकी मरमत्त की और नये बाँध बाँधे और बाँधते जा रहे हैं ।

मानव-जीवन बहुत थोड़ा है, शरीर-कुटीरोंके प्राण-पशुन कब चले जायँ, कुछ ठिकाना नहीं—अतः पाठकोंकी सुविधाका खयालकर हम संक्षेपमें ही कहेंगे ।

घासीरामजी सन् १८६४ में १८ वर्षके थे । वे बरसे चल पड़े—कमाने । विवाह उनका हो चुका था—तब वे ४॥ वर्षके थे । महाकवि 'रत्नाकर'-वर्णित 'अनङ्गके तुरङ्ग' को उन्होंने दूरसे ही देखा था, आसक्ति

उत्पन्न न हुई थी। घरमें जितना कष्ट था, उससे अधिक विदेशमें होनेका भय न था।

वे एक कम्बल और एक लोटा लेकर चले थे। कम्बलके ऊपरके बेकार रोयें झड़ चुके थे। वे जयपुर होते हुए दिल्ली चले। जयपुरसे विदा होते समय उन्होंने हसरत भरी निगाहोंसे मरुभूमि और उसके जहाजोंको देखा। तब उन्होंने लोटा तरबूजके जलसे भर लिया और कम्बलमें स्वच्छ, चमाचम वाला बॉथ लिया।

दिल्ली आकर उनका बोझ हलका हो गया। उनका बालू सेठोंकी कोठियोंमें और हकीम खुदावरखाके घर विराजमान हो गया। सेठ लोग उससे देशी स्याहीके अक्षर सुखाने लगे, हकीम साहब उसे मरीजोंको खिलाने लगे। बालू बेचकर धारीरामजीको ३॥॥=) मिले। तरबूजके जलके बदले एक व्यापारी उन्हें दिल्लीनक एक वक्त खिलाना आया था। जन्मभूमिकी प्रशंगता रहन धारीरामजी समझ गये।

३॥॥=) चर्चकर धारीरामजी काशी आ गये। यहाँ उन्हें अपना नामराशि एक व्यापारी मिला जिसकी शोकीमें सुकाना था। धारीरामजीने इससे एक शिक्षा प्राप्त की। बौद्धोंके संसिद्धि मध्य व्यापार करना, जो बहुत लाभप्रद हो।

धारीरामजीने काशीमें दो व्यापार शुरू किये। संस्कृतके विद्यार्थियों और निम्नजातियों के पानीके जोर से पाना चना खरीदकर सईसोंके हाथ बेचने लगे। यह व्यवहार प्रतापकालका था। सायद्वार के एक गाली सोचकर मकर पान करने लगे। यहाँ विद्वानों-महानेवाले, गेलके दो पुराने का गुणधर्म ज्ञात होते थे, उनका अध्यापन गेल के मोतलमें मर लेते थे और यहाँमें मो-आर और गुलाब का खाना इन मिलकर, मरिचियोंमें घुंमकर

बेचते थे। इन दोनों व्यापारोंसे उन्हें महीनेभरमें ६१)।।। प्रातः हुए।  
अवश्य ही यह 'नेट प्राफिट' था।

काशीकी सेवा धासीरामजी ६ ही महीने कर सके। इसके बाद वे  
बङ्गालकी ओर बढ़े। उन्होंने तीन चीजें साथ लीं—( १ ) अपने एक  
ग्राहकका इस आशयका प्रमाणपत्र कि धासीरामने हमें ६ महीने शुद्ध तेल  
बेचा, ( २ ) विश्वनाथजीका चन्दन, ६ महीनोंमें एकत्र किया हुआ  
और ( ३ ) १२ बोतल गङ्गा-जल।

एक मुठ्ठी चन्दन और एक बोतल गङ्गाजलके प्रतापसे वे सब प्रकार-  
के ताप सरलतासे सहते हुए, बिना पैसा खर्च किये, बङ्गाल पहुँच गये।  
वहाँ एक देहाती कसबेमें उन्होंने डेरा जमाया और वहाँके शत्रु प्रसिद्ध  
व्यक्तियोंका घर वे चन्दन-गङ्गाजलकी सहायतासे पहचान आये और  
प्रशंसा-पत्र लिखला आये। एक बार देख लेनेपर वे कुल भी नहीं भूलते  
थे—इस विषयमें कुत्तोंकी शक्ति उनसे बहुत कम थी। धासीरामजीकी  
आकृति, भाषा और व्यवहारके कारण संसारके हास्यमें बहुत वृद्धि हुई—  
यह कसबा संसारमें ही था।

इसके बाद धासीरामजीने चन्दनका प्रारम्भ किया और शुरू करनेके  
दिन उन्होंने 'जाया', 'पितामह' और 'कन्या'का अर्थ जन्मभर न समझने-  
की शपथ कर ली। हम भी संकोच कहनेकी शपथ-सी कर चुके हैं, अतः  
वही कर। १० वर्षोंमें धासीराम 'मिठ' हो गये, बङ्गाली जर्मीदार उनके  
घर आकर हुक्का पीने लगे और हैंडनोट लिखनेका अभ्यास करने लगे।

इस बीच उन्होंने घर बराबर रुपया और चिट्ठियाँ भेजी थीं, जिनके  
उत्तर लेकर उनके बहुतसे रिश्तेदार आये थे और वहीं बरा गये थे।  
वे ही उनकी पत्नीको भी लेते आये थे और धासीरामजीने फिरसे

महिमा भी पूरी तौरसे समझ ली, जब उन्हें अनायास ही कई पुत्र भी हो गये ।

सेठ धासीराम यातायातके लिए वहाँ ऊँट रखना चाहते थे, पर जहाँके पञ्चतन्त्रके टीकाकार 'उष्ट्र'का अर्थ 'कश्चित् पक्षिविशेषः' लिखते हैं, वहाँ उनकी यह आशा कैसे पूरी हो सकती थी ?

इसके बाद आया सन् १९१४ । दो वर्ष पहलेसे ही सेठजी १९१४ की अगवानीके लिए धोती कसे बैठे थे—अब उन्हें तौंद निकल आयी थी । सेठजीने गद्गद होकर अगवानी की और विदाई की रोते हुए । १९१४ भी उन्हें याद रखेगा ! अगवानीकी प्रसन्नतामें सेठजीने अपना सारा गोदाम बेच डाला, तब औरोंके गोदाम बेच डाले ; लोहा भी बेचा लकड़ी भी, तेल भी बेचा तेलहन भी, दूध भी बेचा गाय भी, गधे भी बेचे घोड़े भी, सोना भी बेचा बालू भी, यहाँतक कि आदमी भी बेचे—स्त्रियाँ तो किस खेत की मूली थीं । कुशल यही हुई कि उन दिनों वे अपनी पत्नीको एकदम भूल गये थे ।

सेठ धासीरामजीने हजारों नामोंसे कारोबार किया था । १९१९ में वे सब गदियाँ टूट गयीं, बहुतांका दिवाला निकल गया ; पर न-जाने किस शुक्तिसे सबका रूपया सेठजीके यहाँ चला आया, जैसे सब नदियोंका जल समुद्रमें चला जाता है और अन्तमें 'एकमेवाद्वितीयं ब्रह्म'की तरह केवल एक फर्म रह गया—धासीराम टनटनदास चमरिया ।

इसी वर्ष उनके जन्मपत्रमें सनीचर साढ़े साती ही भया, राहु वृषभ भाद्रपद चले गये और राहुपर नेत्रकी पूर्ण दृष्टि पड़ने लगी । उस समय उनके चुर अन्तर्क थे ! इसका फल भी प्राप्त हुआ ।

उनकी आजींके पत्रोंमें उन्हें उल्टा की जागको एक चिट्ठी लिखकर नाश्व किता और सब उजगर राग बे-बनका आनिर्वास करताथा । सेठजीने



इसका वह उत्तर दिया जो सर तेजबहादुर सप्रू या भूलाभाई देसाईको भी न सझता । उन्होंने कहा—कोई तो बेचता ही, अतः मैंने बेचा तो क्या ? मेरे घर पैसा आना आप लोगोंको क्यों खलता है ?

पञ्च निरुत्तर हुए, पर दूसरा अभियोग लगा ।—तुमने खर्ची मिलाकर धी बेचा । हिन्दुओंको धर्मभ्रष्ट किया ।

इसका उत्तर सेठजी न दे सके । उनपर २० लाख रुपया जुर्माना हुआ । सेठजी उसे स्वीकारकर लौट आये ।

अपने पुत्र टनटनदास, पूर्णमल्ल और जुहारमल्लसे परामर्श करके सेठ घासीरामने काशीमें एक पाठशाला और क्षेत्र खोलनेका निश्चय किया । इसके बाद ही उनकी वहीमें 'घासीराम टनटनदास चमारिया संस्कृत पाठशाला व क्षेत्र'के नाम २० लाख रुपया जमा हो गया । काशीमें ३॥ लाख रुपयोंसे ६ तल्लेका एक मकान सड़कर खरीदकर उसपर साइन्बोर्ड झुला दिया गया । मकानके नीचेके तीन तल्ले किरायेपर उठा दिये गये—पाठशालाके हिसाबमें ही वह रुपया जमा होगा । चौथा तल्ला स्याली रखा गया—मालिकोंके टहरनेके लिए । अन्तिम दो तल्लोंमें क्षेत्र और पाठशाला हो गयी । ८ विद्यार्थी और एक मुनीम रख दिया गया । दिनमें ३-४ पण्डित आकर पढ़ाने लगे । इनमें से कोई साहित्य-दर्शनाचार्य था, कोई वैभाकरणाचार्य, तो कोई वेदान्त-वितुण्ड । सभी अपनेकी प्रशाना-व्यापक लिखकर इतने संतुष्ट थे कि २०) रुपयमें ही अपना काम चला लेते थे और ७५) की रसीद हर महीने मुनीमको दे देते थे ।

इस पुण्यकर्मकी समाप्तिके कुछ महीनों बाद सेठ घासीराम चल्त वसे । उनसे ज्ञातुओंका कथन है कि पाठशाला बनवानेके शोकमें वे मर गये, पर उस वह न मानेंगे । कारण यह कि अपना कर्म हीमें जमा था और है ; पाठशालाके नाम उसकी रक्षणी नहीं हुई । पाठशालाके

मकान भी ठनठनदासके नामसे खरीदा गया—पाठशालाके नाम नहीं । दूसरे इस कामसे सेठजीको अनेक सुविधाएँ प्राप्त हुई थीं ।

१—२० लाख रुपयोंपर इनकम टैक्स न देना पड़ता था ।

२—ये रुपये उनके व्यवसायमें लगे थे । उनपर ३) सैकड़ा सूद मूलमें जमा करके, अधिक आय बिना वहीमें लिखे, तिजोरीमें चली जाती थी ।

३—इस बहाने काशीमें एक मकान हो गया और ठहरनेकी जगह हो गयी ।

४—दूर-दूरतक कीर्त्ति फैल गयी ।

५—पण्डित नामक बन्दीजन सुपतमें प्राप्त हुए ।

६—मुनीम और विद्यार्थी नामक सेवक भी संतमें मिले जो ज्ञानपर अग्रधानी करने और धिदा करने जाते थे ।

७—मुनीमजीके जरिये काशीका बाजार-भाव रोज मालूम होता था और मुनीमजी जरूरत पड़नेपर बनारसी साड़ी, लँगड़ा आम, अमरुद वगैरह भेजा करते थे । आदि, आदि—

अतः हम सेठजीके शत्रुओंको झूठा समझते हैं । शत्रु सदा झूठे होते ही हैं ।

सेठ घालीरामजी मरनेके बाद कहाँ गये होंगे, इस बारेमें भी तरह-तरहके मत हैं, पर हमें उनसे कोई प्रयोजन नहीं । उनके पुत्रों और पौत्रोंने उनकी विधा धर्मधाममें की । अपने गाँव और उनके आसपासकी सब विधवा-पारिवर्तियोंके अर्थमें उनके लिए, निराश्रित ब्रह्मण्यके सुखवातः मन्त्र-सूक्त और सैदा पाठके लिए विविध विद्याओंको एकत्र किया । पर सदा फलवर्तके अर्थवर्तियोंके आश्रय मिली; अर्थात् विहित, वचना हुआ सब धर्म-स्वर्ग पर आता—योंमें एकदम लाभ दिना; निरुद्ध

और तत्कालीन नाना पदार्थ भी टी-पार्टियोंमें समाप्त कर दिये, जो बचे हुए थे; जो कम्बल और धुस्मे आदि विलायती कम्पनियोंने 'रिजेक्ट' (अस्वीकृत) कर दिये थे, उन सबको बड़ी उदारतासे ब्राह्मणोंको दे डाला।

सेठ ब्रासीरामके पौत्रोंने भी बहुत दरियादिलीसे काम लिया। वे कलकत्ते गये—लोअर चितपुर रोडके और आगेतक; और वहाँ सुगन्धवाला; डौली सेन, वासना मिस्त्रि आदि अनेक अवलाओंको ईयररिंग, नोज पिन्, जार्जेटकी साड़ियाँ आदि देकर सन्तुष्ट किया। वे अबल्लाएँ पूर्णतः इनपर और इनके मित्रोंपर अबलम्बित थीं।

ये पौत्र स्वास्थ्यका सदा ध्यान रखते थे। मेद-वृद्धि-कर घी, दूध या नलाई न खाते थे। टोस्टके साथ नमकीन मक्खन और शीघ्र पचने वाले कुछ पदार्थ खाते थे। बरसे टहलते हुए आफिसघरी और जाते थे और १३६ कदम चलनेके बाद कारमें बैठ जाते थे। प्यास लगनेपर जोके सारसे युक्त वह पुष्टिकर पानी पीते थे, जिसे अंग्रेजीमें 'नियर' कहते हैं। भाँगसे घृणा थी—उसमें ५ प्रतिशतमें अधिक अलकोहल होता है।

इनमें भी एक पौत्र बहुत बुद्धिमान् है। उसका मत यह है कि पाठ-शालाके स्थानपर अस्पताल खोला जाय—क्योंकि देशको जितनी जरूरत चिकित्साकी है, उतनी अस्पतालोंकी नहीं। आयुर्वेदपर उपायी श्रद्धा नहीं है। वह कहता है कि वैद्यकी बौली सुनकर ही रोगीके प्राण काँप उठते हैं, पर नर्सके दर्शनमात्रसे रोगीके सिरपर वर्षे रखनेकी जरूरत नहीं पड़ती। पुनश्च, वैद्यमात्रको पायरिया होता है और रोगियोंपर उसका बुरा असर पड़ता है।

अब हम सेठजी और उनके बंशजोंका वर्णन समाप्त ही कर दे—पर पाठक यह न समझें कि उन लोगोंसे पिण्ड छूट गया। 'आत्मा' में

जायते पुत्रः' यदि सत्य है, तो सेठ घासीराम नये रूपोंमें वर्तमान हैं और जबतक उनका वंश है, तबतक रहेंगे ।

×

×

×

इतनी बातें सुनते-पढ़ते आपका माथा गरम हो गया होगा—यह इस कारण खराब न होने पाये, इसकी नैतिक जिम्मेदारी इस विवरणके लेखकपर है; अतः साध मास है और मेव छाये हुए हैं । समय—२ बजे रात, और स्थान—‘कर्म घासीराम ठनठनदास चमरिया संस्कृत पाठशाला व क्षेत्र’ का छटा तहड़ा ।

एक कमरेमें अध्यापक-विहीन पूरी पाठशाला—अर्थात् आठों विद्यार्थी थे । वे गरुडासनसे बैठकर, हिल-हिलकर, मण्डूक-महिप-बलीवर्द-स्वरमें अपने-अपने पाठ्य-ग्रन्थ धोख रहे थे । एक विद्यार्थी उस स्वरमें धोख रहा था जिसमें संगीतके ऋषभ नामक स्वरका उच्चारण एक जीव-विशेष करता है । उनके रूप परिश्रमके जो कारण थे । एक तो यह कि परीक्षा सन्निकट थी । कारण यह कि एक प्रतिवेशीने अनिद्रा-रोगका कारण इनको बताकर, अदालतमें अर्जा दी थी कि या तो पाठशाला वहाँसे उठा दी जाय, या ये हटा दिये जायें ; पर अदालतने प्रतिवेशीको ही हटा जानेकी राय दी थी । इसीकी प्रसन्नतामें इन छोगाने सात रात यह पुण्यानुष्ठान करनेकी ठान ली थी । आज तीसरा दिन था ।

एकाएक कुन्दन मिश्र मण्डूक-प्लुतिसे विलोचन शर्माके पास आ गये और घासीरामके आगमके संकेते सीढ़ी निकालकर उनमें धनिया मंत्रों किया । उपासीका मिश्रजीने ‘व्यसनेद् शक्यं’ था ।

उसी समय आकाश जग मिश्रजी—नामा-श्रुति भूष-गिरिवाहन कर रहे थे, गरुडभक्तने पूछा—दन्तासुरजी ! कालीपारने लिखा है कि

रघु राजाको यवनी-सुन-पद्मोंका मधु-मद सहन नहीं हुआ ; तो क्या यवनानियोंके मुख बहुत लाल होते हैं ?

दन्तासुरजीके बोलनेके पहले ही मिश्रजी बोले—ओ गरुडध्वज ! वैयाकरणोंके समक्ष अशुद्ध शब्द मत भाषण किया कर ! यवनकी स्त्री यवनी और उसकी भाषा यवनानी होती है । समझा ! 'यवनालिप्याम्' ।

दन्तासुरजीने कहा—परसाल यहाँ जो प्रदर्शनी हुई थी, उसमें मैंने कई यवनियोंके मुँह देखे थे—वे तो लाल नहीं थे । पर जो यवन राजा होते होंगे, उनकी स्त्रियोंके होते होंगे ।

कुन्दन मिश्रने कहा—तू तो गरुडध्वज ! न्याय पढ़के शुक्र हो गया ! साधारण बुद्धि भी नहीं रही । वेदान्तियों कालिदासकी बात पूछने गया ।

गरुडध्वजने कहा—शर्माजी, तौ तुम्हीं कहो । तुम तौ साहित्यकी दाँग तोड़ते हो ।

शर्माजीने कहा—एक तो मधु-मद पद कहाँ है । उसका अर्थ यह है कि शराव पीकर उनके मुख लाल थे । दूसरे यह कि आजकल लोग कालिदासकी उस उक्तिका यह अर्थ करते हैं कि राजा रघुकाँ मुँहकी लाली सहन नहीं हुई, अर्थात् उन्होंने उनके पतियोंका मारकर उनके मुँह पीले कर दिये । पर यह अर्थ नहीं है । अर्थ यह है कि राजा रघुने उन यवनियोंका हरण कर लिया और जिन यवनोंने बाधा दी उनको मार डाला ।

अब सिवारासने न रहा गया । उमने घोखना बन्द करके कहा—  
तुम साहित्य पढ़नेवाले कर्त्तव्य अनर्थ करते हो ।

शर्माजीने उत्तर दिया—तुम अपना धर्मशास्त्र घोखो ! अर्जुनने उद्धृष्टीं विनाह किया था किन्तु ! वह थी रामजीकेकी अर्थात् अमेरिासी ।

सियारामने कहा—शिव ! शिव ! क्या बकते हो ! राजा रघु और यवनी ! यह अर्थ कहाँसे आया ?

शर्माजीने कहा—यह तो कालिदासका सीधा व्यंग्य है । कहीं-कहीं तो व्यंग्यसे भी व्यंग्य होता है ।

अमोलचंदसे भी न रहा गया । उन्होंने कहा—मल्लिनाथकी टीका देखो । वह प्रामाणिक है—‘माघे मेघे गतं वयः’ । ( मल्लिनाथकी उग्र माघ काव्य और मेघदूतकी टीका लिखनेमें ही बीत गयी । )

शर्माजीने कहा—पर, यहाँ तो रघुवंशकी बात है !

अमोलकने कहा—तात्पर्य तो प्रामाणिकतासे है !

शर्माजी बोले—‘माघे मेघे’ का अर्थ भी जानते हो ? उसका अर्थ यह है कि माघ मासमें, मेघ छाये हुए थे; ऐसे समय मल्लिनाथ मर गये ।

सियारामने कहा—तुम नरकमें जाओगे, नरकमें !

वेदान्त पढ़नेवाले दन्तासुरजी बोले—तुम मधु मिथ्या चाविल्लास कर रहे हो ।

कुन्दन मिश्रने उत्तर दिया—सिध्या कैसे ? शब्द-ब्रह्मकी हो उपासना तो हो रही है !

इस समय भी हर्षराम अपनी गीताशुकी गोशीपद छुके हुए थे और भवानीदेव भी सोलना छोड़कर एक भोजनयंत्र निर्माण कर रहे थे । यह देखकर इन दोनोंने अपना ध्यानव्यवहार किया, कुछ इशारेबाजी हुई और मनकल्पन गुरु सियाराम उठे । मनकल्पनने गर्जनाके समाने पोशाक उखाड़ी और मिश्ररामने भवानीदेवको, कन्धे पकड़कर, पीछेकी ओर लिये दिया । जब भवानीदेव उठकर बैठ तो भोजनयंत्र गायब था ।

भवानीदत्त धरकर उठे और अँगोछा समहालते हुए, क्रुद्ध होकर बोले—ऐसी दिलगी किसी कामकी नहीं है। खामखाह किसीको तंग करना ! लाओ इधर !!

पर, इस समय सब लोग गरुड़ासनसे बैठकर, अत्यन्त दत्तचित होकर घोख रहे थे। सबके नेत्र भी बन्द थे।

भवानीदत्तने सबकी पुस्तकें उलट-पुलटकर देखीं, सबके विस्तर उलट डाले—भोजपत्र न मिला। उनकी विकलता बढ़ती जाती थी। अन्तमें वे दन्तामुरके पास गये। कहा—देखो, क्या दो ! मैं कल तुम्हें नया गुड़ खिलाऊँगा। .....अच्छा, एक गुलाबजामुन !

दन्तामुर मीठेके प्रेमी थे। पर, गुड़से इतनी जल्दी गुलाबजामुन मुनकर उन्होंने और कुछ देर धैर्य रखना ही उचित समझा।

भवानीदत्त अब अमोलकचन्दके पास आये, बोले—देख भैया, दे दे ! मैं कल एक कुण्डली तुझसे दिखवाऊँगा, मेरे गाँवके आदमी आये हैं। जाट आने दिलाऊँगा।

पर उद्योतिर्वित् अमोलकचन्द गिनके भी नहीं। अब भवानीदत्त पेर पसारकर बैठ गये, कहने लगे—कौन साला अब यहाँ रहेगा। कल ही चला जाऊँगा। काशीमें क्या क्षेत्रोंकी कमी है, कि जाट साहबकी मिर्कास बिना भग्नी नहीं होगी !

अग शर्माजी बोले—क्या एक कामजके टुकड़ेके लिए जान दे रह हा !

भवानीदत्तने स्वर बदलकर कहा—कामजका टुकड़ा ! वह ब्राह्मी-कल्प है ! कामजका टुकड़ा ! क्या लालच पशना जायेंगे ? उनके यहाँके एक लड़केको पूरे ३३ दिन भाग विद्याकर प्राप्त किया है।

पूरी पाठशालाने भवानीदत्तको थप दिया। महदृश्वजने पूछा—कौन बेताल भइ ?

भवानीदत्तने कहा—बैताल भट्टको वस, तुम्हारे जैसे गधे ही नहीं जानते। काशीमें १३६ वर्ष पहले एक भट्ट थे। उन्हें बैताल सिद्ध था। एक बार काशीमें ऐसा हुआ कि २४ घण्टे बीतनेको आये, पर कोई मुर्दा नहीं आया। डोंग लोग धर्मशास्त्रियोंके यहाँ पहुँचे और कहा कि ऐसा कभी नहीं हुआ था, यह अनर्थकी बात है। धर्मशास्त्रियोंने सब पोथी-पत्रे देखे, पर कोई विधान न मिला। इधर, यह बात स्पष्ट ही थी कि कोई अनर्थ होनेवाला है। महाश्मशानमें २४ घण्टे मुर्दा न आवे !

अन्तमें सब पण्डित भट्टके यहाँ गये। भट्टने बैतालका आग्रह न किया और कुछ देर चुप रहकर कहा—बैतालकी आशा यह है कि आप लोगोंमें जो सबसे बड़ा पण्डित हो, आज उसीकी बलि दी जाय।

यह सुनते ही सब पण्डित प्राण लेकर भागे। डोंगोंने रोकनेकी चेष्टा की पर वह व्यर्थ हुई। तब बैताल भट्टने डोंगोंसे कहा—तुम लोग जाकर एक चिता लगाओ, आज हमीं जलेंगे।

डोंगोंने आँसू बहाते हुए उनकी आज्ञाका पालन किया। बैताल भट्ट आये। वे नंगे बदन थे, गलेमें प्राचीनाबीत (उलटा पहना जनेऊ) था, पैरोंमें खड़ाऊँ, हाथोंमें करताल। वे गा रहे थे—बन्दे श्रीवैतालम्

उन्होंने पूरा भजन गाया। उनके पुत्रोंने झुककर प्रणाम किया। उन्होंने कहा—हम जो ब्राह्मी कल्प लिख आये हैं, उसे सुरक्षित रखना। अब हमारा ही वंश सङ्कटके समय काशीका मान रखेगा। महाप्रभु बैताल तुम्हारा कल्याण करे। भौंण जस कम पीना। हमारा प्रत्येक वंशधर अब बैताल भट्ट कहावेगा। काशीके पण्डितोंको ब्रह्मज्ञान नहीं होगा। मेरा शाप है कि.....

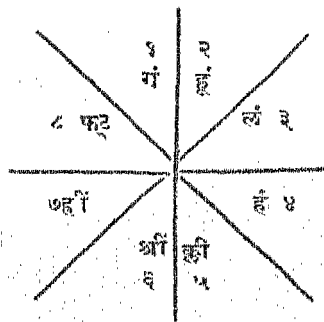
इसी समय 'शाम नाग मल्य है' मुनीकी पढ़ा शर कुछ लोग एक मुर्दा किये हुए आए। डोंगोंने 'बैताल भट्टका जप' बाप किया।



वेताल भड़ने कहा—अब इस चितापर इसीको रख दो। साथमें हमारा यज्ञोपवीत, खड़ाऊँ और करताल भी। हम अब धर नहीं लौटेंगे। हम पारमें रहेंगे और सब पण्डितोंसे कह देना कि अगर कोई वहाँ दिखायी पड़ा तो बलि दे दूँगा। अबसे मैं शुद्ध वेताल हूँ।

श्रोता यह कथा सुनकर स्तब्ध हो गये। भवानीदत्तने पुनः कहा—तभीसे कोई पण्डित पार नहीं जाता।

गरुडध्वजने काँपते हाथोंसे अपनी बगलबन्दीके भीतरसे भोजपत्र ऐसे निकाला, जैसे सर्प निकाल रहे हों। भवानीदत्तने उसे झपटकर ले लिया। उसपर एक अष्टदल बना था—



### देवदत्त

श्रीं ह्रीं ह्रीं कमलदलनिवासिनि नीलसरस्वाति देवदत्तस्य भुक्तमन्त्रे सहस्रं वस वस, मेधां देहि, सिद्धिं प्रयच्छ एं।

अमोलकने पूछा—यह क्या है ?

भवानीदत्तने उत्तर दिया—यह अष्टदल एकी प्रकार भोजपत्रपर लिखकर पात्रकको धारने आसनके नीचे कन्धपर अष्टदलके नीचे लिखा

मन्त्र ५००० बार जपना होगा ।

दन्तासुरने पूछा—यह देवदत्त क्या है ?

भवानीदत्तने कहा—उस स्थानपर साधकका नाम रहेगा ।

कुन्दन मिश्रने पूछा—विधि ?

भवानीदत्तने कहा—साधकी अमावस्याके एक दिन पहले यह जप करना पड़ता है और अमावस्याकी अर्धरात्रिको एक औषध खाकर किसी नदीमें कमरभर जलमें खड़े होकर 'श्री ह्रीं क्लीं' मन्त्रको सूर्योदयतक जपना पड़ता है । वह दवा अत्यन्त उग्र है । वह पच जाय तो साधककी स्मृति इतनी प्रबल हो जाती है कि कोई भी ग्रन्थ एक बार पढ़नेसे याद हो जाता है । पर, प्रायः दवा पचती नहीं, वमन हो जाता है । वमनका छोंट्रा यदि शरीरपर कहीं पड़ जाय तो वहाँ कुछ हो जाता है । संभवतः इसीलिए जलमें खड़े होनेका विधान है ।

सिया रामने कहा—अमावस्या तो चार दिन बाद ही है !

भवानीदत्तने कहा—मैं तो इस बार करूँगा ।

हर्षरामने पूछा—औषध क्या है ?

भवानीदत्तने उठकर एक कोनेमें रखी एक गटरी खोली । उसमें एक मोटी-सी पुस्तकमेंसे एक कागज निकाला । उसपर यह लिखा था—

### “ब्राह्मीकल्प”

झाटल ( लोध )	२ तोला
भृतावास ( बहेड़ा )	१ ”
पूतना ( हरीतकी )	३ ”
राणिका-पुष्प ( जुहीके फूल )	७ ”
नटी ( मालकौबानी )	१ ”

चौच ( तज )	२३	”
अनार्थतित्त ( चिरायता )	५	”
कावनासिका ( कौआठोठी )	२	”
नकुलेष्टा ( राखा )	२	”
गोस्तनी ( दाख )	४	”
अभिमुखी ( भिलावाँ )	३	”
विट्खदिर ( एक तरहका खैर )	२१	”
ब्राह्मी	१०	”

यह औषध एक मात्रा है। एक दिन पहले उपवास करना चाहिये। भवानीदत्तने कहा—हरद्वारकी ब्राह्मी दो सेर मेरे पास है। बाकी बीजे खरीद चुका हूँ।

कुन्दन मिश्रने विगलित होकर कहा—भतानी भाई! गुले भी करा दे!

भवानीने कहा—भाई, एक पैसा रोज दोत्रसे मिलता है। पिछले आठोंमें ७) दक्षिणामें मिले थे। नुस्खा लैनेमें प्रायः सब व्यय हो गया। सनौरमाको बन्धक रखकर ४) लाया, तब जाकर काम चला।

कुन्दनने कहा—पैसे मेरे पास हैं। कम होंगे तो कम्बल बेच दूँगा।

दत्तासुरने कहा—मैं भी करूँगा।

धीरे-धीरे सब तैयार हो गये। भवानीदत्तने कहा—दो बातें इसमें नहीं लिखी हैं। एक यह कि दवा घर ग्लाकर ‘धीं ही त्तै’ का जप करते हुए नदी-तटपर जाना चाहिए और जबकि मन्त्र होना चाहिए। मौनव्रत सर्वोदय होनेपर ही दूरेगा। दूसरी बात यह कि लौटकर उड़दकी खिचड़ी और दही खाना चाहिए।

विलोचन शर्मामें श्रद्धासे गद्गद होकर पूछा—भवानीजी ! तुम्हें इस ओर प्रवृत्ति कैसे हुई ?

भवानीदत्तने कहा—तेठ घासीराम मरनेके पहले अपने वंशजोंके लिए एक उपदेश-पत्र लिख गये हैं, पहले उसे सुनो । उन्होंने लिखा है—

“( १ ) पढ़ने-लिखनेमें ब्राह्मणोंने अत्यन्त सूक्ष्म बुद्धिका परिचय दिया है । यदि वे उस बुद्धिका उपयोग व्यवसायमें करने लगेंगे तो भारवाड़ी भूखों मरने लगेंगे । अतः ब्राह्मणोंको सदा व्यवसायसे दूर रखो । इसका सहज उपाय यह है कि उन्हें दान देते रहो, क्षेत्र और पाठशाला खोलते रहो ।

( २ ) ब्राह्मणोंको अँगरेजी और हिस्साब न पढ़ने दो ।

( ३ ) अँगरेजोंकी सदा मदद करो । हाकिमोंको अपना बाप-सम्झो । उन्हें दावत और चन्दा देते रहो ।

( ४ ) अपनी पगड़ी उल्लकी लकड़ी है, जिसके पैरोंपर रख दोगे, वह उल्लू ही जायगा । इस शस्त्रको सदा साथ रखो ।

( ५ ) गम खाना सदा अच्छा है । गाली खानेसे गम खानेकी शक्ति बढ़ती है ।

( ६ ) कसरत कभी न करना । इससे खूनमें गरमी आती है और गम खाने की ताकत घटती है । शरीर जितना भी ढीला रहे, उतना अच्छा ।

( ७ ) उधार मिलना 'भाव' है । उधार रहो । जरूरत पड़े तो उधार दो भी । पर, लेने पर ध्यान ज्यादा रखो ।

( ८ ) व्यापार कोई लोभ नहीं होता । मन लोभ होता है ! उसे बढ़ा रखो । जिसमें दो देना भिले नही व्यापार है ।

( ९ ) देशभक्ति बहुत बड़ी चीज है—पर पैसों से बहुत छोटी । जहाँ पैसोंकी बात हो वहाँ देशभक्तिको फटकने भी मत देना । जहाँ पैसोंकी बात न हो वहाँ देशभक्ति करो ।”

भवानीदत्तने कहा—इसलिये, अब मैं व्यापार करूँगा । शामको मैं कुंजगली में जाता हूँ, दलाली करता हूँ । अभी कुछ नहीं मिलता—बड़े-बड़े धरियार वहाँ हैं । पर, २-३ महीनोंमें २)-२॥) रोज मिलने लगोगा ।

सियारामने कहा—मैं पकौड़ी बनाना जानता हूँ ।

भवानीदत्तने कहा—कुंजगलीमें खोमचा लगाओ । अपने अध्यापकोंसे तीन गुना ज्यादा लाभ रहेगा ।

कुन्दन मिश्रने कहा—अपने लोग मिलकर एक कम्पनी खोलेंगे । पर मक्खन जरूर बेचेंगे ।

दन्तासुरने कहा—मक्खन ज्यादा नहीं बिकेगा । पहले ऐसी चीजें बेचो, जिन्हें विद्यार्थी खरीदें ।

कुन्दनने कहा—मक्खनकी जरूरत बड़े आदमियोंको बहुत होती है, विशेषतः उन्हें जो रायबहादुरीके फेर में रहते हैं ।

हर्षरागने कहा—पहले पुस्तकोंकी दूकान करो ।

भवानीदत्तने कहा—जयपुरी साड़ी और मारवाड़ी पगड़ीकी दूकान पहले करनी होगी । मारवाड़ी हमें उल्टू बनाकर रखना चाहते हैं, हम उन्हींसे दूना लाभ करेंगे ।

दन्तासुरने कहा—यह पीछे देखेंगे । अभी तो ब्राह्मी-कल्प कर डालो ।

\* \* \*

औपध कूटने के लिए सबकी पारी बँध गयी थी । विलोचन शर्माने

कूटते हुए कहा—भवानी गुरु ! यह नकुलेष्टा आदिभित्थोंका क्या हित करती है ? इसे न्यौले खाते हैं न ?

वेदान्ती दन्तासुरने कहा—धर्मशास्त्र गणिकासे दूर रहनेको कहते हैं, और आयुर्वेद उसका सेवन बताता है !

हर्षरामने कहा—यह चोच भी विनिच है । इसीके किसी गुणपर मुग्ध होकर तो हिन्दीमें चोंच शब्द नहीं चलाया गया ?

गरुडध्वजने कहा—बहेड़ेका नाम भूतावास क्यों है ? बहेड़ेके पेड़पर भूत रहते हैं क्या ?

भवानीने कहा—भूतोंका पता नहीं, पर कल्क तो रहा था ।

सियारामने कहा—पूरी मात्रा एक बारके भोजन जितनी हो जायगी ।

गरुडध्वज बोले—इसीसे एक दिन पहले अनशन करनेकी विधि है । गुरुपाक चोर्जे इसमें कई हैं, जैसे नटी, गोस्तनी ।

विलोचनवार्माने कहा—मुझे सबसे अन्वर्थ नाम लगा—अनार्थतिक । अनार्योंपर बहुत अच्छा ध्यंग्य है । अनार्यका अर्थ जानते हो ? जिनकी लड़कियोंसे हम धर्मशास्त्रोक्त विवाह नहीं कर सकते ।

आज अनशन था—सबका । दन्तासुरके शून्य उदरमें वायु स्वच्छन्द होकर इधर-से-उधर दौड़ रही थी—जैसे स्टेबान खाली रहनेपर 'शर्टिंग' होती रहती है । उसने कहा—और चाहे जो वस्तु शून्य अच्छी होती हो, पर उदर शून्य अच्छा नहीं होता । मेरे पेटमें हवा ऐसे दौड़ रही है, जैसे किसी सुरंगमें रेल ।

सियारामने कहा—इतने ही से घबरा गये ! नगवाकूने नारायण-भाण्डोदर कहा है । अब उन्नी निपटि गयसे ! उसके पेटमें क्या-क्या नहीं हो रहा है ! कहीं रेल नञ रही है, कहीं राफसमें पाडे उछल रहे हैं, कहीं गधे दुलत्ती झाड़ खे हैं, कहीं अक्षयार छप रहे हैं !

विलोचन शर्माने कहा—ब्राह्मणोंमें भृगुजी सबसे कुल-कलङ्क हुए ! पहले लक्ष्मी ब्राह्मणोंके चरणोंमें पड़ी रहती थी। भृगुजीने विष्णुजीकी लाल मारी—सोभरस ज्यादा पी गये होंगे। तभीसे ब्राह्मणमात्र लक्ष्मीकी लाल खाने लगा ! इसी लिए ब्राह्मणोंके लिए मद्य निषिद्ध कर दी गयी।

हर्षराम बोले—अच्छ ही हुआ, नहीं तो जरा-सा माया भरम होते ही लाल साहबकी लाल मारने दौड़ते ! देखो न ! रावण पीने लगा था, सो क्या उपद्रव किये !

अमोलकचन्दने कहा—रातको जप करना है। सब एक ही जगह रहना। किसीको शपकी आयी तो मैं लाल मारूँगा।

भवानीदत्तने कहा—तुम्हारा जप श्रेष्ठ हो जायगा।

अमोलकने कहा—हो जायगा तो हो जाय। पर, मेरे रहते किसीका कार्य नष्ट नहीं हो सकता।

दूसरे दिन अर्धरात्रिको पाटशालसे आठों सज्जन निकले। राव लंगोट और उसपर एक अँगोछा पहने और कम्बलकी घोधी मारे हुए थे।

थोड़ी दूर जानेपर सबके एक दूधवालेने इन्हें देखा और चिन्हाया—क्या गुरु ! किसी सेठको फूंकने जा रहे हो ?

किसीने उत्तर न दिया। आगे आकर एक अँधेरी गली मिली। भवानीदत्त अगुआ थे। वे रुके और गलीमें अपना कम्बल बिछाकर गरुडध्वजको उसपर लेटनेको कहा। वह कुछ चक्रवाचा, पर लेट गया। भवानीदत्तने उसे कम्बलमें खपेटा और चार आदमियोंको उठानेका संकेत किया। अब भवानीदत्त आगे हुए। बीचमें जीवित गरुडध्वजका हात और पीछे सिंगाराम एवं दस्तासुर। भवानीदत्तने गरुडध्वजका कम्बल ओढ़ा और खुल्ला बढ़ाया।

कई गलियोंमें घूम घामकर ये लोग एक निर्दिष्ट घाटपर आये और एकदम किनारे लाकर गरुड़ध्वजको लेटाया। वह लेटा ही रहा। इन लोगोंने उसे मुर्के मारे, उठाना चाहा पर वह उठा ही नहीं। तब इन लोगोंने उसे उठाया और बड़ी ज़ोरोंसे पानीमें फेंक दिया और साथ ही सब के-सब धमाधम पानीमें कूद पड़े। इसके बाद सब तैर-तैरकर, सीढ़ियोंपर कमरभर पानीमें आकर खड़े हुए और जप करने लगे।

थोड़ी देर बाद घाटके तख्तेपर ८-१० सण्ड-मुसण्ड आदमी आकर बैठ गये। उन्होंने बीचमें एक कालटेन रस्ती, बगलमें दुःख-भञ्जन अर्थात् तेल पिलायी हुई मिर्जापुरी बाँसकी लाठियाँ। इसके बाद वे बड़ा शोरगुल मचाकर—‘लगे थारो’ करने लगे; १६ परियोंका नाच होने लगा।

भवानीदत्तके ठीक बगलमें एक नाव आकर रुकी तो उन्होंने हूँ हूँ करके दूर हटानेको कहा। नाववालोंने नाव जरा हटा ली। वे कभी नाव आगे ले जाते थे कभी पीछे। उसपर ७-८ आदमी थे।

थोड़ी देर बाद वहाँ १५-२० सिपाही आ पहुँचे, साथमें थानेदार भी थे। कोड़ी खेलनेवाले उठकर खड़े हो गये, अपने-अपने लह उठा लिये।

थानेदार साहब उनके पास आये। एकके कानमें कुछ कहा और तब सब लोग एकदम राज्ञातटपर चले आये। एकने इनपर पूछा—  
के हौ रे ?

साधकोंको कुछ सन्देह नहीं हुआ। वे जप करते रहे। तब दूसरी छपट पड़ी—बाहर निकली। साधकोंने पीछे देखा, फिर सीधे खड़े होकर जप करने लगे।



धानेदार साहब ने कहा —साले पकें खूनी हैं ! मारो सालों को !

हर्षरामके कन्धेपर सटीक लट्ट बैठता । वे 'हाथ' करके पानीमें गोता खा गये । पर, तुरन्त निकलकर किनारेकी ओर बढ़े । पानीसे बाहर बंधे कम्धा पकड़कर बैठ गये और बोले—तुम्हारा सर्वनाश ही जायगा । ब्राह्मणका जप भ्रष्ट कर दिया ।

धानेदारने कहा—जप करते हैं ! किसीका खून करके अभी फेंक दिया, जप करते हैं ! इन सालोंको भी निकालो तो !

पर शेष साधक यह सुनकर काँपते हुए स्वयं ही निकल आये । भवानीदत्त जरा पकें थे । वे तैरकर पार निकल जाना चाहते थे । जैसे ही गोता मारकर वे कल दूरपर निकले, नावपरसे किसीने पीठपर लौड़ा मारा । भवानीदत्त मुच्छिन्नप्राय हो गये । उसी अवस्थामें उन्हें नावपर खींच लिया गया और किनारे लाया गया ।

धानेदारने फरमाया—धानेपर ले चलो । यहाँ जाऊ उलघाओ ।

इसके बाद वे कोड़ी से अनेवालोंकी ओर घूमे । एकसे कहा—गंडाजी सुक्रिया ! आपने बड़े मौकेपर मदद दी । नहीं तो ये निकल भागतें । हमारे खुफियाने भी खूब काम किया ।

साधकोंको एक ही रस्सीमें बाँधकर धाने पहुँचाया गया और एकही झोंडरीमें बन्द कर दिया गया ।

प्रातःकाल अर्थात् १२ बजे जमादारने धानेदार साहबसे कहा—घाटपर कुछ नहीं मिला ।

भीतरसे एक सिपाहीने आकर कहा—हुजूर, सालोंने तमाम कामरा खराब कर दिया ! सब जगह कै और पैखाना !

हुजूरने कहा—उन्हीं हरामियोंसे साफ कराओ ।

इतने ही में भीतरसे मुनीमजी निकले । ये साधकोंसे भेंट करके आरहे थे । उन्होंने थानेदार साहबको पूरी घटना सुनायी । अन्तमें कहा—साला सिद्धा करै था । वींको फल पा गयो, ईव छोड़ दी । थारै खोपियाको भरस हो गयो ।

तीन-चार दिनोंकी तहकीकातके बाद थानेदार साहबको भी विश्वास हो गया । उन्होंने मुनीमजीको बुलवाया और एकान्तमें कुछ बातें की । मुनीमजीने उनकी जेबमें कुछ जरूरी कागजपत्र रखे और साधकोंको साथ लेकर चले आये । पाठशालामें आते ही उन्होंने साधकोंको अपनी-अपनी चीजें उठाकर तुरत जानेको कहा, जिसमें वे स्वच्छन्द होकर साधना कर सकें ।

पाठशालाके मकानपर साइनबोर्ड अब भी धूल रहा है । वही, पुराना साइनबोर्ड; पर ब्राह्मी-कल्पके व्यर्थ होनेके कुफलके कारण उसपरसे 'पाठशाला व क्षेत्र' मानो जादूसे उड़ गया है और उस जगह तरह-तरहके बेल बूटे दिखायी पड़ रहे हैं ।

## मालिश

बाबू रामचरित्रसिंह दरते-दरते उस कमरेमें पहुँचे, जिसमें आसमानाति आँस मुँह किये, पलँगपर एक स्त्री सोई थी । वह गान्धु निद्रामें थी । बाबू साहब दबे पाँवों पलँगके सिरहाने जाकर खड़े हुए और तब अनुकर, सोई हुई स्त्रीका मुँह देखने लगे ।

पलँगपर स्त्रीका, और विशेषतः सोई हुईका वर्णन करना भारतीय शिष्टताके विरुद्ध है । बानर जातिके हनुमानजीको भी रावणकी सोई हुई स्त्रियोंको देखकर यही सचचक्षुण हुआ था । अतः इस परम सभ्य युगके लेखकको ऐसा ऐसा नहीं ही करना चाहिये ।

तो, बाबू रामचरित्रसिंहने उस महिल्याके खुले मुँहमें पानी डाल दिया । वह धबकाकर उठ बैठी और उसने बाबू साहबको देखते ही कहना शुरू किया—

तुम बड़े अशिष्ट हो । पढ़े-लिखे अपण्डित हो । लङ्कामें उत्पन्न होने योग्य हो ।

बाबू साहबने कहा—‘साहित्यरत्न’ होनेका यह अर्थ नहीं कि तुम भले गालियों दो, भले ही वे संस्कृतमय हों ।

महिल्याने कहा—मेरे पिताजीको तुम्हारा यह आचरण ज्ञात हो जाय, तो वे क्या करें, जानते हो ?

बाबू साहब बोले—ईश्वरको धन्यवाद दो कि मेरे पिताजी जीवित नहीं हैं । पहले मैं भी मुँह खोलकर सोता था । एक दिन उन्होंने मेरे मुँहमें एक वर्रे छोड़ दी थी । उस दिनसे मैं जब सो जाता हूँ, तब मुँह अपने-आप बन्द हो जाता है ।

बाबू रामचरित्र सिंहकी धर्मपत्नी मांलिखी देवी 'साहित्यरत्न' ने कुछ दृष्टिसे उन्हें देखा, और तब आँचलेसे मुँह और गला पोंछने लगी।

पतिदेव बोले—तुम मुँह खोलकर सोती हो, यह तुम मानती ही नहीं थी, वही मैंने आज प्रमाणित किया है। स्त्रीकी त्रुटियाँ सुधारना पतिका कर्तव्य है। यह शास्त्रोंमें लिखा है।

पत्नीने कहा—शास्त्र ! खूंटोंकी गणनें शास्त्र हैं।

पति बोले—तुम जैसी स्त्रियोंके कस्बाणका उन्हें बहुत ध्यान था। इसीलिये उन्होंने यह नियम बनाया है कि पत्नी पतिके बाद सोये और पहले उठ जाय अर्थात् पत्नीके दोष पति न देख पावे। इस सम्बन्ध युगके किसी मनोवैज्ञानिकने कभी यह बात सोची है ?

पत्नी चुप रही।

पति पुनः बोले—मैं उन खूंटोंकी गणनोंको शास्त्र मानता हूँ। न मानता तो तुम्हें तलाक दे देता। कितनी अशुभ बात है—मुँह खोलकर सोना।

पत्नी चुप ही रही।

पति फिर कहने लगे—विज्ञानकी दृष्टिसे देखो ! मैंने सोनेके दोने सौंस जोरसे निकलती है और जोरसे भीतर जाती है। सौंस तो गिनी-गिनायी होती हैं, अतः उनका कम उपयोग करता ही अच्छा है। दूसरे, सौंस भीतर जाते वक्त, मक्खी या मच्छर भी भीतर जा सकता है।

पत्नीने बहुत हँस होकर कहा—तुम्हें आगिज रोग है तो जागो। तुम्हें क्या लक्ष्म भर रहे हो !

बाबू रामचरित्रने कहा—जगो तो दा ही बजे हैं, खेत हागेमें खे है। बेरा प्रेम गेखत। इस सुतके पति जग्गी पतिगणमें ११ अजेके बाद कभी बातकत करे है ?

पत्नी बोली—तुम कृपा ही रखो । जाओ, छतपर टहलो ।

पतिदेवने कहा—तुमने तो भवभूतिके नाटक पढ़े हैं । उनमें राम-चन्द्रजीने सीताजीके साथ पूरीकी पूरी रातें किस विशिष्ट प्रकारसे वार्ताव्यप करती हुए बितायी हैं, यह वर्णन भी पढ़ा होगा ।

मालिनी देवी बोलीं—उन्हें अयोध्यामें अवकाश न मिला होगा ।

पति बोले—इससे उनके प्रेमकी कमी तो ज्ञात नहीं होती । आज-कलके युवक तो महीनेभरमें उब जाते हैं । मैं रघुवंशी हूँ, रामचन्द्रजीका कुछ असर खूनमें है ।

मालिनी देवीने सहसा कहा—अरे ! मैं अपनी पायजंजल तो छतके आलेपर ही भूल गयी हूँ ।

पतिदेवने क्रुद्ध होकर कहा—याद न आ जाता तो सुनह बन्दर उठा ले जाते ।

पतिदेव उसे लाने बाहर निकले । मालिनी देवीने उठकर भीतरसे दर-वाजा बन्द कर लिया और तकिया लगाकर लेट रही ।

रघुवंशी बाबू साहब लौटे तो पत्नीने कहा—आकर छतपर टहलो ।

बाबूसाहब क्रुद्ध होकर कुछ ऐसी बातें कहने लगे जैसी पठित लीप साधारणतया नहीं कहते हैं ।

अन्तमें बाबू साहब छतपर जाकर टहलने लगे ।

रातके रात्राटेमें छतपर टहलते हुए सोचने लगे कि मेरे बाहरके लीप कितने मूर्ख हैं कि सोये पड़े हैं । अहो ! ये अपना कितना आमूल्य समय नष्ट कर रहे हैं ! इस समय जागकर ये ताश खेल सकते थे, गोंजा पी सकते थे, दूसरेके धनकी चिंता कर सकते थे, अपने मैले कपड़े धो सकते थे, शीर्षासन कर सकते थे या आपसमें मारपीट तो कर ही सकते थे ! आखिर सौंस तो गिनतीकी हैं, उन्हें इस तरह, बेकार निकल जाने देना

कितनी खेदजनक बात है ! उनके मनमें आता था कि सबको जगा दूँ और कहूँ—अरे मूर्खों ! अपना-अपना धर्म करो, मृत्यु तुम्हारी चोटी पकड़े खाड़ी है !

नींद कम आनेसे बाबू साहब प्रसन्न हुए । सोचा, अपने साहित्यिक कार्य रातको किया करूँगा । 'तोता मैना' का संशोधन, 'चार यार' पर टीका, 'भूतनाथ' पर भाष्य आदि कार्य आखिर करने ही तो हैं । उन्हें और करेगा भी कौन !

पर, यह भी न हो सका । जब काम करने बैठते थे तब आँखें भारी होकर बन्द होने लगती थीं, सिरमें दर्द होने लगता था । जब पोथीपत्रा रखकर, जल पीकर, दिया गुलकर सोनेका उपग्रम करते थे, अर्थात् सिर और पैरोंके नीचे तीन तकिये लगाकर, चादर ओढ़कर आँखें बन्द करते थे, तब आँखें हलकी होकर खट-से खुल जाती थीं, सिरमें विचार भर जाते थे । हारकर रोशनी करके पुनः साहित्यिक काम करने बैठते थे और पुनः आँखोंपर भारीपन चढ़ बैठता था और रोशनी काटने दौड़ती थी । इसी प्रकार रात बीतती थी ।

कई दिनों यही प्रक्रिया हुई तो उन्हें आवेश अर्थात् प्रेत-लीलाका संदेह हुआ पर उनके नापित्तने कहा कि शहरमें बिजली लगनेके बादसे भूत रहे ही नहीं । जब इतने छोटे जन्तु या आदमीका ऐसा निश्चय है तब उन्हें न होना लज्जाजनक होता । अतः यह विचार भी मनसे निकाल डाला ।

तब वे वैद्यजीके यहाँ गये अर्थात् रोगीकी हैसियतसे गये, जैसे तो रोज ही जाते थे ।

वैद्यजीने पास तुलासा और दो डैगलिगोंने नक्क पकड़ी ! नीच-बीच-से ताँतरी उँकना भी नक्क चूता रुकी थी, जेन पकके मायक अर्थात् राम रामनिशाने मायक 'कन' लगाते हैं ।

देखकर उन्होंने गम्भीर 'हूँ' किया और कहा —कुछ नहीं ।

बाबू साहबने कहा—यह तो मैं भी जानता हूँ कि न मुझे टी० बी० है, न संघर्षी, न सच्चिपाल, न कालरा, न डिप्थीरिया, न कार्बकल, और न कोई भयंकर रोग । पर 'कुछ नहीं' शक्य है ।

वैद्यजीने कहा—सब कुछ हो सकता है ? तुम्हें रक्त-चाप हो सकता है; उससे हार्टफेल हो सकता है; या मस्तिष्ककी शिराएँ फट सकती हैं या उन्माद हो सकता है । तुम जीवन्मृत हो सकते हो ।

सिंहजीने कहा—जीवन्मृत और जीवन्मुक्त तो एक ही वस्तु है; मेरा भाग्य उतना प्रबल नहीं । पर यह रक्त-चाप क्या है ? राम-चाप और कृष्ण चाप तथा भृकुटी-चाप तक तो मेरी गति है ।

वैद्यजीने कहा—यह उन तीनोंसे भयंकर है । यह मनुष्यको ही चाप बना देता है—भृकुटीकार का नाम सुना है ? वह इसी रक्त-चापका परिणाम है ।

सिंहजीने कहा—हो सकता है । दंत घोषा और शरीर-बीणाका घोषा पढ़ा-सुना है । और केवल भृकुटी ही चाप हो सकती है तो पूरा शरीर तो और भी आसानीसे हो सकता है । पर यह है क्या ?

वैद्यजीने परमाया—तुम्हारे जैसे लोगोंका शरीर चाप होनेके सुयोग्य युक्त होता है । खाट्टी बैठे रहनेसे, गरिष्ठ पदार्थ खानेसे, रक्त बढ़ता है और चर्बकिके रूपमें परिणत होता है; वह चर्बक रक्तको चाँप देती है और कुछ दिनोंमें शरीरको चाप बना देती है ।

बाबू साहब—यह ज्ञान तर्कगम्य ज्ञान होती है । पर, उपाय ?

वैद्यजी बोले—चापने ही 'चापना' बना है । इस शब्दपर मैंने बहुत गवेषण करके एक लेख लिखा है ।

बाबू साहब—उसे 'हिन्दुस्तानी' में गोल देना । पर मुझे क्या उपाय बतलाते हो ?

उन्होंने कहा—यदि प्राकृतिक चिकित्सा चाहते हो तो पत्थरका कौयला १० मन इकट्ठा करो। तुम्हें लोहेकी जालीपर बैठा कर नीचे पानी उवाला जायगा, उसकी भाप लगनेसे चर्बी पिघरेगी। यह सहन हो जानेके बाद

—तबेपर भूंगे ?

उन्होंने कहा—नहीं, ईटके भट्टेके पास, एक कुर्सीपर बैठाये जाओगे। तुम्हारे हाथ-पैर बँधे रहेंगे।

सिंहजी—प्राकृतिक चिकित्सा मेरे बसकी नहीं है। और कोई उपाय हो तो बताओ।

उन्होंने पूछा—जेल जाने लायक कोई काम कर सकते हो ?

जवाब मिला—अपने आप हो जाय तो नहीं कह सकता।

उन्होंने कहा—तो सिर्फ चार आने खर्च करो, कांग्रेसके सदस्य बन जाओ।

सिंहजी—कांग्रेसने सबको यों ही अपना सदस्य मान लिया है।

वे बोले—तो चवची भी बची। अब तुम कहीं पिकेटिंग करो या कोई गरम लेख लिख डालो।

—पिकेटिंग इस समय बन्द है। लेख लिखे रखे हैं, पर कोई सम्पादक छापता नहीं। पत्रकी जमानत जब्त हो जायगी।

उन्होंने कहा—ब्रह्मियोंने कहा है, शतं वद, एकं मा लिख। अर्थात् कष्टो सौ, लिखो मत एक भी। तो वैधानिकके भागण कर दालो, जेल चले जाओगे।

आजकल प्रान्तमें कांग्रेसी गुप्तर हैं, देशभक्तिके भाषणपर पकड़ेगी ही नहीं।

बैद्यजी बोले—गुप्तरमानोंकी गिरा दरो, और जाओ !



इससे होगा क्या ?

जेलमें चूकी चलानी पड़ेगी, राम-बोले कूटना पड़ेगा; चूकी गल जायगी, बनेगी नहीं ।

सिंहजीने उत्तर दिया—लेकिन डाका, खून बगैरह किये बिना अब ये दण्ड न मिलेगे ।

तो ब्रवी करो ।

सिंहजीने कहा—यह तो तुम्हारे प्रीमशर्तके बिना भी कर सकता हूँ । तुम वैद्यकके हिसाबसे कोई उपाय नहीं जानते ?

वैद्यजी बोले—क्यों नहीं ! संगीतका कुछ अभ्यास है ?

संगीतसे और वैद्यकसे क्या संबंध ?

वैद्यजी बोले—अरे बाप रे ! संबंध ! संगीतमें ७२ 'टाट' होते हैं, वैद्यकमें ७२ प्रमेह । दोनोंका गहरा सम्बन्ध है ।

सिंहजी बोले—तब तो सब संगीतज्ञोंको प्रमेह होता होगा !

वैद्यजीने कहा—क्या चारों करते हो ! अरे, प्रमेह हो जाय तो संगीतसे अच्छा किया जा सकता है ।

सिंहजी बोले—संगीतसे तो मुझे बहुत प्रेम है । सब फिल्मोंके रेकर्ड मेरे पास हैं ।

वैद्यजी बोले—वह संगीत है ! संगीत है भ्रुपर्द धमार और खयाल । हमारा अन्नप्राशन भ्रुपर्दसे हुआ था ।

सिंहजीने कहा—आपका मतलब उस गानेसे है, जो शुरूसे अन्ततक 'आ आ' 'हाउ हाउ' और कै करने जैसा लगता है ?

वैद्यजीने क्रुद्ध होकर कहा—जरा भी संगीत तुम्हें सुनवा दूँ तो तुम्हारे प्राण निकल जायँ । खैर, तुम फिल्महाल मालिश कराओ ।

इससे क्या होगा ।

वैद्यजी—शरीरमें कुछ गरमी पहुँचेगी, चर्बी पिघलेगी, साथ ही हम जुलाब देंगे।

लाभ होगा ?

वैद्यजी—मालिश और हमारी दवाके योगसे हाथको गंथा बनाया जा सकता है। तुम किस फेरमें हो ! पर मालिश विधिपूर्वक होनी चाहिये। कैसे।

सर्वोत्तम बात तो यह है कि उस समय तुम नग्न हो जाओ, जैसे स्वामी लोग हो जाते हैं।

माफ कीजिये। मैं अभी महात्मा नहीं हुआ हूँ।

तो लाभ भी कम होगा। तो फिर, कौपीन पहन लो, और किसी कड़ी चीजपर बैठो या लेटो। उदाहरणार्थ, चबूतरेपर या चौकीपर। मालिश दिलसे नीचेकी ओर होनी चाहिये और इतने हलके हाथों कि जोर जरा भी न पड़े।

सिंहजीने पूछा—अर्थात् कोई स्त्री मालिश करे ?

वैद्यजीने कहा—बात तो यही है। इसीलिए अस्पतालोंमें नर्स रखी जाती हैं। तुम भी कोई नर्स ठीक कर लो।

सिंहजी बोले—हमारे शहरकी नर्स तैयार नहीं होती। मैंने एक बार कोशिश की थी, अपनी स्त्रीके लिए।

वैद्यजी—पर यह तो आवश्यक है। कोई एंग्लो-इण्डियन ठीक करो।

हमारे शहरमें नहीं हैं। कलकत्ते जाना होगा।

तो आओ।

अपनी स्त्रीसे काम नहीं चल सकता ?

वैद्यजीने कहा—नहीं। मालिशका अर्थ है—रक्तको संचल करना। वह पर—स्त्रीके मालिश करनेसे ही पूरी मात्रामें हो सकता है।

सिंहजी बोले—तो मैं आज ही चला जाऊँगा ।

वैद्यजीने कहा—साधु ! जा सको तो अच्छा हो ।

तीसरे दिन सिंहजी वैद्यजीके यहाँ आये ।

वैद्यजीने पूछा—गये नहीं ?

सिंहजीने कहा—अपनी पत्नीसे सब बातें कहीं । सुनकर उन्होंने आपके विषयमें जो कुछ कहा, वह मैं आपके सामने नहीं कह सकता । इसके बाद वे मेरे ससुरजीके यहाँ जाने लगीं । मैंने कहा—‘तुम जाओगी तो मैं भी कलकत्ते जाऊँगा ।’ तब वे नहीं गयीं । अब वे ही मालिश करती हैं, कुछ लाभ भी है ।

वैद्यजीने कहा—मैंने बहुतोंकी मालिश बतायी, पर कोई जा न सका । खैर, कुछ लाभ है, यह अच्छी बात है । और मुनो, भावना ही प्रधान है । अपनी पत्नीको मालिशके समय परकीया समझनेकी चेष्टा किया करो । दो ही हस्तोंमें अच्छे हो जाओगे ।

## अमृतवल्ली

श्रीमान् पण्डित सदाशिव पाण्डेयजीके पूज्य पितृदेव जन्म कैलासधाम गये तो अपने पुत्रको संसारके लिए, और संसारको अपने पुत्रके लिए छोड़ गये। वे महान् आत्मा थे।

श्रीमान् पण्डित सदाशिव पाण्डेयजी अपने पितापर एक बातके कारण बहुत ही प्रसन्न थे। वह यह कि उन्होंने ईश्वरको धोखा देकर उसके यहाँसे कुछ बुद्धि चुरा ली थी और उसे अपने काममें न लाकर अपने पुत्रको दे गये थे।

सदाशिवजीने अपनी बुद्धिका पूरा उपयोग किया। ईंट, चूनेके जिस विशिष्ट प्रकारके ढेरको सदाशिवजीके पिता मकान समझते थे, उसे उन्होंने अपनी ज्ञानदृष्टिसे ईंट-चूना ही देखा और उसके प्रति वे निःसंग, मोहमुक्त हो गये और शीघ्र ही उन्होंने बुद्धिके साथ न्यायका योग कर, ईंट-चूनेके भाव ही उसे बेच डाला।

ईंट-चूना बेचकर, उसे विक्रवानेवालोंका कमीशन बाद कर जो कुछ बचा; उसका सदुपयोग करनेमें सदाशिवजीने जिस बुद्धिका परिचय दिया, उससे उनके परिचित चकित हो उठे; और सब बात तो यह है कि कभी-कभी सदाशिवजी भी अपनी बुद्धिकी दौड़पर चकित होते थे। इस प्रकारकी बुद्धि सदाशिवजीके ठीक पहलेके तीन पूर्वजोंमें न थी। यहाँ इतना कह देना उचित होगा कि सदाशिवजीके पिताजीके शालग्राम पत्थरके श्रेणिके कारण यद्यपि ईंट या चूनेमें शामिल न थे, पर उदारताके कारण सदाशिवजीने इसपर ध्यान देना भी मुच्छता समझकर, उन्हें भी

ईट-चूनेके साथ ही दे दिया था; बेचा न था—बेची तो थीं ईंटे और चूना ।

ऋषि-मुनियोंने संसारको असार, स्नेहशून्य, श्मशान आदि कहा है । बहुत शीघ्र ही सदाशिवजीने इस तत्त्वको हृदयंगम कर लिया । बस यह बात ही उसकी समझमें न आती थी कि उक्त तत्त्वकी शिक्षा तो उतनी साधारण स्त्रियाँ भी दे देती हैं, जिन्हें साधारणी कहा जाता है, फिर ऋषि-मुनियोंकी आवश्यकता क्या थी ।

उक्त तत्त्व हृदयंगम करनेकी दशामें ही सदाशिवजीकी दुर्दशा प्रारंभ हुई । संसारने तो क्या, उनके नगरने भी उन्हें अपना न समझा, अपने लिए उत्सृष्ट न समझा । हाँ, तीन-चार व्यक्ति उन्हें बाँह देने आगे आये जो उनके पिताके पैर खींचा करते थे । उन्होंने सदाशिवको चिंता न करनेको कहा और यह बतलाया कि मारवाड़ियोंका अन्न खानेका ब्राह्मणको अधिकार है, उसी तरह जैसे कुत्तेको उच्छिष्ट खानेका या अपरिचितको काट लेनेका; अतः सदाशिवको इस अधिकारका उपयोग और उपभोग करना ही चाहिये ।

पर, सदाशिवको बहुत ऊँची कोटिका ज्ञान हो गया था—सविकल्पक भी, निर्विकल्पक भी । अतः एक दिन रातको उसने नगरका त्याग ही कर दिया । अपनी जन्मभूमिका चिह्न तो वह स्वयं था ही, जन्मभूमिके लोगोंका चिह्न भी उसने साथ लिया । जिन लोगोंसे जो कुछ ऋण मिल सका था, उसने ले लिया था ।

कुछ आचार्योंका कथन है कि किसी नगरकी विभूति, कला, शिष्टता आदिका ज्ञान उस नगरकी सर्वोत्कृष्ट वारानवाका घर देमकर और जगने वार्तालाप कर, जाना जा सकता है । अपने नगरकी समृद्धि आदिकी जगने चलनेपर, प्रत्यक्ष प्रमाण देनेके ही अभिप्रायसे ही कदाचित् सदाशिवने जेन-

में 'चंद्र तस्वीरे-नुतों' को स्थान दे दिया था। सदाशिवकी जेब उसके दिलपर थी।

स्टेशनपर, सदाशिवको एक परिचित मिले थे। सदाशिवने देखते ही, उन्हें अलग ले जाकर कहा —

किसीसे कहना नहीं आसाम जा रहा हूँ। मेरे एक रिश्तेदार वहाँ जानसे मर गये हैं। वे हाथियोंके सौदागर थे। उनका सब धन मुझे ही मिलनेवाला है। वे दस हजार तीन सौ तेरह हाथीके दाँत छोड़ गये हैं।

परिचितने पूछा—दाँत तो बहुत बड़े होंगे ?

सदाशिवने उनके शरीरको देखा, उसे दृष्टिसे नापा और कहा—इतने बड़े कि तुम्हारी तोंदपर रखकर दनाये जायँ तो पीठ पार कर जायँ।

परिचितने यह बात पसन्द न की, न यह बात पसन्द की कि उन्हें हाथीके पैरोंके नीचेसे निकाला जाय।

इसके बाद उन्होंने सदाशिवको पान खिलाया, दो रुपयेकी मिठाई खरीद कर दी और कई बार मलकर दस-दस रुपयेके पाँच नोट भी दिये। सदाशिव सदासे संकोची थे, नहीं तो वे नोट न ले सकते।

गाड़ी आ गयी। सदाशिव पहले दर्जेमें घुसा, परिचितने मना करने-पर भी अपने कर-कमलोंसे विस्तर बिछाया और गाड़ी कोस भर चली गयी तब भी वे आतुर नेत्रोंसे उसी ओर देखते रहे।

धीरे-धीरे नगरमें सबको यह बात ज्ञात हो गयी। जिन्होंने सदाशिवको ऋण न दिया था, उनकी धर्मपत्नियोंने उन्हें पड़ोसियोंके कानोंके लिए बहुत मधुर शब्दोंमें फटकारा और उन्हें यह भी स्मरण दिलाया कि उनके पिता (अर्थात् धर्मपत्नियोंके और ऋण न देनेवालोंके) उनकी तुलना किन-किन जीव-जन्तुओंसे किया करते थे। और यह

पहला अवसर था जब उन लोगोंने भी उन उपमाओंकी सार्थकताको हृदयसे स्वीकार किया ।

×                      ×                      ×

सदाशिवजी और उनके ज्ञानका भार न सह सकनेके कारण ही मामों गाड़ी एक स्टेशनपर अर्धरात्रिको खड़ी हो गयी । उसी समय एक अंग्रेज भीतर घुसा । कुलीने बिस्तर बिछाया, बाकी सामान ऊपरी वर्थ पर रखा और चला गया । साहबने एक बेंतकी डोलचीमेंसे एक चीशिका गिलास और दो बोटलें निकालीं । उन दोनोंमेंसे थोड़ा-थोड़ा तरल पदार्थ गिलासमें डाला और पी लिया । इसके बाद उन्होंने अपने तकियेके साथ खेलवाड़ प्रारम्भ किया । अंतमें उसके भीतर कुहनीतक हाथ घुसा दिया और उसे सिरहाने पटक कर चारों ओर देखा । केवल एक ही वर्थपर एक आदमी सोया था । साहबने डैम, ब्लडी, पिग आदि श्रुतिसुखद शब्दोंका पुष्ट उच्चारण किया और तब पैखानेमें चले गये ।

इसी समय सदाशिव महरी नौदसे उछलकर खड़े हो गये । उन्होंने भीत और सशंक नेत्रोंसे चारों ओर देखा और तब केवल एक तकिया बगलमें दबाकर ट्रेनसे उतर पड़े । जल्दीमें तकिया साहबका ले लिया था । उतरे भी पीछेकी ओरसे थे ।

बहुत-सी लाइनोंको पारकर, तथा कँटीले तार लॉघकर सदाशिव एक अंधकार-पूर्ण मैदानमें पहुँच गये । पर वे रुके नहीं, बढ़ते ही गये । इसी समय उन्हें अपनी ट्रेन खिसकती मालूम हुई । कुछ देरमें वह स्टेशनसे बाहर हो गयी ।

सदाशिव खड़े हो गये । वे ट्रेनको ऐसे देखने लगे जैसे अपने कबच-कुंडल लेकर जाते हुए ट्रेनको दर्जने देखा था । ट्रेन जब आँखोंसे ओझल हो गयी तो उन्होंने एक लम्बी साँस ली और तकियेके भीतर

हाथ घुसेड़ दिया । उनका हाथ किसी चीज से लगा, उन्होंने उसे निकाल कर जेबमें रखा और तब उनका हाथ तकियेके भीतर ऐसे घूमने लगा जैसे गोकुलकी ग्वालियोंका मंथन-दंड दही-भरे घड़ेमें घूमता था ।

जब और कुछ न मिला तो सदाशिव क्रुद्ध हो उठे और उन्होंने डारविन साहबका यह सिद्धान्त सत्य सिद्ध कर दिया कि आदमी बन्दरकी औलाद है । सदाशिवने हाथों, पैरों और दाँतोंकी सहायतासे तकियेको ऐसा रूप दे दिया कि उसे उसका बाप भी (यदि हो) न पहचान सकता ।

इसके बाद वे आगे बढ़े, पर बन्दरपन सिरपर सवार था । वे चलते-चलते सूखी घास उठा-उठाकर जेबमें भरने लगे । बहुत दूर जाकर उन्हें एक गढ़ा मिला । उसे देखकर उन्हें अति हर्ष और सन्तोष हुआ । वे उसी में उतर पड़े । उकड़ूँ बैठकर उन्होंने जेबसे घास निकाली और 'चन्द तस्वीरें' बुताँवाली जेबसे दियासलाई निकालकर घास में आग लगा दी । इसके बाद तकियेमेंसे निकली चीजको निकालकर देख डाला । ३०७ रु) रुपयोंके नोट थे ।

सदाशिव ने जूतेसे जलती घास को बुझा दिया और गढ़ेसे बाहर निकलकर आगे बढ़े । उन्हें अत्यन्त पश्चात्ताप हो रहा था । जीवनमें आज, पहली बार उन्होंने देशभक्तिका काम किया और उसमें इतनी असफलता ! जिन अंग्रेजोंने भारतको लुह डाला, सदाशिव उनमेंसे एकका सिर्फ तकिया चुया पाये और उसमेंसे निकले केवल ३०७ रु) रुपये !

लेकिन सदाशिवको कुछ सन्तोष हुआ । यह सोचकर कि अंगरेजोंकी टेंट तो टटोली ही नहीं जा सकती, क्योंकि वे न धोती पहनते हैं, न लुंगी ; जेब टटोटन! उतरनाक टट्टरा ; अतः तकियेपर हाथ साफ करना ही संभव था ।

सदाशिवने निश्चय किया कि अंगरेजोंके तकियोंपर ही हाथ साफ



करना ही सम्भव और श्रेष्ठ कर्म है। उसने इसीको देशको स्वतन्त्र करने-का सर्वोत्तम उपाय समझा। सदाशिवको सुभाष बाबू पर बहुत क्रोध आया कि इतनी सहज-सी बात उनकी समझमें न आयी ! उन्हें 'आजाद हिन्द फौज' की जगह 'लकिया साफ फौज' बनानी चाहिये थी।

सदाशिव इस समय योगी हो रहा था। उसे न गरमी लग रही थी न सरदी, न भूख न प्यास, एवं चित्त एकदम निर्मल और प्रसन्न था, उसमें विश्वबन्धुता हिलोरें ले रही थी। अनायास किसी के गले लगानेकी इच्छा हो रही थी।

सदाशिव चलता ही रहा। वह योगकी उस उच्च भूमिपर पहुँच गया था, जहाँ पहुँचकर भ्रम होता ही नहीं, आत्माका प्रवेश दूसरोंकी आत्मामें होने लगता है और पैर जमीनपर नहीं पड़ते।

पी फटने लगी। उत्कृ अपने बसेरोंकी ओर लौटने लगे, काक-कुलने मङ्गल-गान आरम्भ किया; ताम्रजूड़ काँ-काँ-काँ-काँ करके पड़ोंसे भूमि खोदकर फेक देनेका उपक्रम करने लगे, गर्भांघ्र घोबी लादी लादने लगे। दिशाएँ स्पष्ट दिखायी पड़ने लगीं, दुर्गन्धपूर्ण वायुके तंज झोंके बीच-बीच में आने लगे। सदाशिवजीने देखा, कुछ दूरपर एक नदी है। 'सकल सौच करि जाइ नहाये' इस चोपाईकी प्रथम क्रिया उन्होंने समाप्त की और पीछे मुड़ चले। वे इस भाव से लौटे जैसे प्रातर्भ्रमण कर लौट रहे हैं।

वे स्टेशनके बगलके रास्तेसे नगरमें प्रविष्ट हुए, एक दुकानपर जलपान किया। उन्हें यह सोचकर बहुत कष्ट हुआ कि मेरे परिचितकी दो रूपयोंकी मिटाई वह अंग्रेज खा रहा होगा।

इसके बाद वे एक पुस्तकालयमें प्रविष्ट हुए और 'द्वयानन्द मत मूलोच्छेद' निकलवाकर पढ़ने लगे।

११ बजे उनका ध्यान भंग हुआ। वे वहाँ से बाहर निकले और शहरमें घूम फिरकर दरी, कम्बल खोजने लगे।

×                      ×                      ×

तीन चार दिनोंके बादकी बात है।

सदाशिव दोपहरके समय एक गलीमें चहलकदमी कर रहे थे। सहसा उनकी दृष्टि एक मकानकी तीसरी मंजिलपर पड़ी। वे ऊँची नजरके आदमी थे।

उन्होंने इधर-उधर देखा। बगल हीमें पानकी एक दुकान थी। उन्होंने उसका (और विहारीके 'दीठि बरत बाँधी अटनु' इस दोहेका) पहारा लिया। सामनेके मकानकी तीसरी मंजिलकी एक खिड़कीतक उनके नेत्रोंने एक रस्सी फोक दी और उसपर उनका मन-नट लंगोट बाँध कर दौड़ पड़ा।

उस खिड़कीपर एक स्त्री—स्त्री कहनेसे संतोष न होगा, सदाशिव को—खड़ी थी। सदाशिवको काली दि कुलीसे युक्त माथेवाला उसका मुँह नये तबले जैसा लगा। इसी समय वह 'आयी' कहकर खिड़कीसे हट गयी। अन सदाशिवका मन तबला हो गया और उसमें समस्वर तबलेसे निकला स्वर गूँजने लगा।

वेदात शास्त्रमें संसारको गंधर्व-नगर कहा है। सदाशिवने यह सुना था। आज उसने इस एक मकानकी एक खिड़कीके कारण ही संसारका गंधर्व-नगर होना स्वीकृत कर लिया।

किसी भी तमोर्छसे उसके आस-पासके लोगों, विशेषतः स्त्रियोंका परिचय प्राप्त करनेकी कलमें सदाशिवने पूर्ण दक्षता प्राप्त कर ली थी। उस कलाका उपयोग कर सदाशिवने जान लिया कि वह मकान एक गणपती वैश्या है और वे वैद्यजी अपनी एक कन्याके साथ रहते हैं तथा

वह अविवाहिता है । मकान वैद्यजीका ही है और रहेगा—जबतक वे भाड़ा देते रहें ।

काम-शास्त्रके एक आचार्यका मत है कि नायक-नायिकाने एक दूसरेको देख लिया हो तो दूत या दूती का प्रेषण हो सकता है । दूसरे का मत है कि प्रत्यक्ष-दर्शन न हुआ हो पर गुण-श्रवण हो गया हो तो दूत-प्रेषण अनुचित नहीं । तीसरेका कथन है कि एक ही ने दूसरेको देखा था उसके गुणोंका श्रवण किया हो तो भी दूत-प्रेषण हो सकता है । सदाशिव सदासे इन तीसरे आचार्यको ही आचार्य मानते आये थे । अतः उन्होंने स्वयंदूत होनेका निश्चय किया ।

सदाशिवने 'शुभस्य शीघ्रं' स्मरण कर, तमोलीको सोनेके बर्तनके आठ पान लगानेकी आज्ञा दी । पानका दोना हाथमें लेकर वे उस मकानके दरवाजेपर रुके, जेबसे सौ रुपयेका एक नोट निकालकर उस पर रखा और भीतर घुसे ।

सहन पारकर एक कमरा था । उसमें पूरवकी ओरकी दीवारके सहारे एक सज्जन बैठे थे । उनकी खोपड़ीपर जापानी मशीन (कैशकर्सिनी) फिरी हुई थी, माथेपर चन्दन पुता हुआ था, गलेमें रुद्राक्षकी माला थी, मुँहपर सिकुड़नें थीं । वे सुरवाल (चुस्त पैजामा) और लघेदा (बगलबन्दी) पहने थे ।

सदाशिव उनके पास जाकर खड़ा हुआ । उन्होंने मिनाटभर देखकर पूछा—

ब्लडप्रेसर है ?

सदाशिव ने छुककर उनके सामने दोना और नोट रखा, उनके धरणीपर भाषा रखा और उसी मुद्रामें रहकर कहा—

हो सकता है, जरूर है। मुझे अब जो न हो जाय सब थोड़ा है। मेरा उद्धार करो प्रभु !

वैद्यजीने सदाशिवको बैठाया। पूछा—कहाँसे आते हो ?

सदाशिवने आँखें बन्दकर कहा—कुछ न पूछिये ! अब तो गन्धर्व-नगरमें हूँ। मृगमरीचिकामें पड़ा हूँ। विमल जलका स्वच्छ सरोवर दिखला दो प्रभु !

वैद्यजीने पूछा—यह कबसे है ?

उत्तर मिला—अकस्मात् हो गया।

प्रश्न हुआ—तुम्हारे कौन हैं ?

सदाशिवने वैद्यजीके पैरोंपर सिर रखकर कहा—

अबतक कोई नहीं था। अब आगे आप हैं, पीछे आपका कोई सम्बन्धी ही रहे तो उत्तम हो। पिता मर चुके। अब आप ही को एक तरहका पिता मान लिया; शास्त्रकी आज्ञा भी है। आप भी स्वीकार कीजिये।

वैद्यजीने फिर सदाशिवको बैठाया, कहा—ध्वराओ नहीं।

सदाशिवने आँसू पोंछते हुए कहा—तो आश्वस्त हो जाऊँ ? वचन देते हैं न ?

वैद्यजीने कहा—चिन्ता क्या ! सब ठीक हो जायगा।

सदाशिवने कहा—आप मेरे प्राणदाता बनिये।

वैद्यजी बोले—चिकित्सासे सब ठीक होगा।

सदाशिवने कहा—आपकी कृपा हो तो आपकी दवा खाये बिना भी अच्छा हो सकता हूँ। थावा तारकेश्वरने स्वप्न दिया, बस मैं सीधा आपके यहाँ चला आया। अब उठूँगा नहीं।

वैद्यजीने कहा—इलाहाबादके राथ वात भी है।

सदाशिवने कहा—और भी बहुत कुछ है। दिल धड़कता है, रोयें खड़े हो गये हैं, नसों ऊपरकी ओर खिंच रहीं हैं, दिल घंट रहा है, मुँह सूख रहा है ; प्यास वैद्यजी प्यास !

सदाशिवजीने जीभ बाहर निकाली ।

वैद्यजीने आवाज लगायी—मुरली मैजों ! इता आउ ! (मुरली घेटी ! इधर आना !)

तभी सदाशिवकी पीठकी ओर एक दरवाजा खुला और एक स्त्री—केवल स्त्री कहने से सदाशिव नाराज होगा—आकर खड़ी हुई ।

सदाशिवने धूमकर देखा । विजलीकी करंट जैसे उसे मार गयी । वह धक्का खाकर मुरली मैजोंके पैरोंपर जा पड़ा, फिर खड़ा होकर बोला—प्यास ! कलेजा चक्कर खा रहा है, आँखें भीतर धँस रही हैं, शरीरमें भूकम्प,

तभी वैद्यजी उठे, सदाशिवको सम्हालकर बैठाया और मुरली मैजोंसे एक गिलास जल लानेको कहा । वह जल लेकर आयी । वह कुछ चक्करा गयी थी ।

वैद्यजीने एक शीशीसे एक पात्रमें थोड़ा कमकासब निकाला, कहा—इसे गलेसे नीचे उतार लो, ऊपरसे जल पी जाओ ।

सदाशिवने घट-घट करके दोनों चीजें गलेके नीचे उतार दीं और फिर जीभ बाहर निकाली ।

वैद्यजीने कहा—अब जल नहीं मिलेगा । नुकसान करेगा ।

सदाशिवने फतार दृष्टिसे वैद्यजीको देखा, अनुनय-भरी दृष्टिसे मुरली मैजोंको देखा ; तब उसके नेत्र बन्द हो गये, उसका शरीर काँपने लगा, हाथ पैर हँडने लगे, वह गों-गों करके लम्बा हो गया और दाँती लग गयी । साँस रुक-रुक कर चलने लगी ।

वैद्यजी धबराकर पास आये, नाड़ी देखी, मुरली मैजाँसे कहा—  
मरीच्यादि तेल मुँहमें डालो, मैं सिर पकड़ता हूँ ।

मुरलीके हाथ काँप रहे थे, तेल मुँहमें अधिक गिर गया और  
ओठोंके दोनों ओरसे बहने लगा । वैद्यजीने सदाशिवकी नाक कसकर  
बन्द कर दी । १०-१५ सेकेंड बाद सदाशिवने मुँह खोल दिया और  
हाँफता हुआ उठ बैठा । तब उसने शीशी सहित मुरली का हाथ पकड़कर  
कहा—सब मेरे मुँहमें डाल दो, और भी सब तरहके तेल डाल दो ।  
मेरे मरनेकी कोई चिन्ता नहीं । वैद्यजी ! आप इस बार मेरे सीनेपर  
चढ़ बैठियेगा ।

वैद्यजीने कहा—धबराओ नहीं, तुम्हें फिट हो गया था । पर हमारी  
दवा बड़ी तेज है । मुरदोंको जिन्दा कर सकती है ।

सदाशिवने कहा—जी हाँ, और 'वाइस वरसा' । ( अर्थात्  
तद्विपरीत ) ।

वैद्यजीने मुरलीसे कहा—३३ सन्तरोँका रस निकाल ल्याओ ।  
गोल मिर्च ३१ दाना, नमक अन्दाजसे ।

सदाशिवने कहा—मीठा अच्छा नहीं लगता । बल्कि नीबूका या  
कटहलका रस अच्छा रहेगा । दो तोले हींग मिलाकर,

वैद्यजीने कहा—नहीं, नहीं, वच्चपनकी बात मत्ति करो । वैद्यके घरमें  
हो, वैद्यकी बात मानने होगी ।

सन्तरोँका रस पीकर सदाशिवने पूछा—पान खा सकता हूँ ?

वैद्यजीने कहा—हाँ ।

और उन्होंने सदाशिवका पानका दोना खोला, फिर बोले—सोनेका  
बर्क ताकत करेगा, जरूर खाओ ; रूको, यह लो एक गोली, चन्द्रोदर  
रस है । पानमें रख लो ।

कुछ देर बाद वैद्यजीने पूछा—अब कैसा है ?

सदाशिवने कहा—बहुत अच्छा हूँ, पर दिल घबराता है ।

वैद्यजीने कहा—शामको आना, तब दवा देंगे । दिनभर सोचना पड़ेगा । गम्भीर रोग है ।

× × ×

शामको सदाशिव वैद्यजीके यहाँ पहुँच गये । ८-१० मरीज बैठे थे । सदाशिवको देखते ही वैद्यजीने पूछा—कैसा है ?

सदाशिवने १००) का एक नोट वैद्यजीके चरणोंके पास रखकर कहा—आपकी कृपासे बच गया । पर, शाम कैसा हुई, वह आम बना जानें ! हृदयमें कोढ़ू चलता था, घड़ीकी सुई पर साढ़ेसाती आकर बैठ गया, दिमागके भीतर—

वैद्यजीने कहा—अच्छा, जरा बैठो । इस समय मोहरपर उतना बल्लप्रेशर नहीं है ।

वैद्यजीने एक मरीजकी नाड़ी पकड़ी । ऐसी पकड़ी जैसे वह उन्हींकी रही हो, खो गयी हो और इस समय अकस्मात् मिल गयी हो ।

सदाशिव चारों ओर देखने लगा । दो तीन बालमारियोंमें छोटी-बड़ी शीशियां भरी थीं । सब पर लेबुल लगे थे । ५-६ बड़े-बड़े बर्तन भी रखे थे । एक पर लिखा था—हस्तिमूत्र । एक पर लिखा था—अश्व-मूत्र । सदाशिव पढ़ने लगा—गर्दभ-मूत्र, काक-विष्टा, उच्छक-मल... ।

वैद्यजीने मरीजसे पूछा—क्या तकलीफ है ?

रोगीने कहा—कमरमें दर्द है ।

वैद्यजीने पूछा—जंघामें फुर-फुर होता है ? तब वैद्यजीने पूछा—कौनसा है ? गलेमें चींटी सी रेंगती है ?

रोगीने कहा—इन सब बातोंका अनुभव तो नहीं होता ।

वैद्यजीने कहा—इतना ध्यान सेगी रखे तो हमें दवा करनेमें अड़चन क्यों हो ? कम्पाउण्डर ! कटिभङ्गिनी गुटिका ३, चतुर्मुख ४, वातगज-केशरी २, वात-विधूनन १, योग ७ मात्रा ।

फिर रोगी से बोले—७ मात्रा है । सुबह, दोपहर, शाम । ब्रैतरा सांठ का चूर्ण, गर्दभी-दुग्धके साथ । दाम १ दवाका दाम १४ आना और गर्दभी-दुग्ध २ तोले का चार रुपये । २० मिनटके भीतर दवा पेटमें न पड़नेसे लकवा मार जायगा ।

अब दूसरा रोगी सामने आया । वैद्यजीने नाड़ी पकड़ी । रोगी हाल कहने लगा—कब्ज बना रहता है, त्रिफलासे काम नहीं चलता ।

वैद्यजीने कम्पाउण्डरसे कहा—४ तोला मैदान पापड़ा । हाँ, एक साथ सब खा जाइयेगा । ४ तोला देशी रेंडीके तेलसे । आठ आना ।

रोगीने पूछा—पेट साफ हो जायगा न ?

वैद्यजीने कम्पाउण्डरसे कहा—खन्दक योग ३ तोला । मैदान पापड़ा खानेके एक घण्टा बाद जरूरत समझें तो इसे गरम जलसे खा जाइयेगा । चार आना ।

रोगियोंको विदाकर वैद्यजी सदाशिव की ओर घूमे । पूछा—कहाँ टिके हो ?

सदाशिवने कहा—असारे खलु संसारे सारं श्रीधर्मश्यालिका । सो, धर्मशालामें ठहरा हूँ ।

वैद्यजीने पूछा—क्या करते हो ?

उत्तर मिला—अबतक जो कुछ करता था, वह तो कुछ कहने योग्य नहीं । अब जो करूँगा, वह आपको पसन्द होगा कि नहीं पता नहीं ।

—क्या करना चाहते हो ?



—मैं ? मैं ? आपकी चिकित्सा करूँगा और आपसे चरक पढ़ूँगा ।

—बहुत उत्तम विचार है । पर निर्याहकी क्या व्यवस्था है ?

—अभी मेरे पास ३४४२) हैं । पर चिंता नहीं, 'तकिया सापः फौज' बनाने वाला हूँ; पर नहीं, अब सब काम अकंठा करूँगा ।

—फौज कैसी ?

—देश-भक्तिका काम है ।

वैद्यजी यह सुनकर उठ खड़े हुए । कहा—हमारे घरमें देश-भक्तिका नाम न लेना । नेपाल सरकार हमें कैदखानेमें डाल देगी । तुम जासूस तो नहीं हो !

सदाशिवने वैद्यजीके पैर पकड़ कर कहा—नहीं प्रभु । मैं आजसे देशका नाम भी न लूँगा । भक्ति भाड़में जाय । प्रेम तो चल सकता है ?

वैद्यजीने सोचकर कहा—हाँ, चल सकता है । भक्ति भी चल सकती है, पर देशके साथ उसका संबंध अति अनुचित है ।

सदाशिवने कहा—मेरे लिये आपका कमरा ही देश है, आपका आँगन ही विदेश है ।

वैद्यजीने कहा—ठीक है, तुम कुछ दिन चिकित्सा करो, फिर पढ़ना भी प्रारम्भ करना । तुम्हारा नाम क्या है ?

—मुरली मनोहर ।

—मैं तुम्हें मनोहर कहा करूँ ?

—आप मुझे चमार, भंगी, डोम जो चाहे कहिये । आपको सब अधिकार है ।

वैद्यजीने कहा—देखो मनोहर, एक कमरा कहीं ले लो और उट कर दवा करो । बातकी मात्रा अभी अधिक है, पहले उसे कम करना होगा ।

सदाशिवने कहा—कफ भी कम करना होगा । जिन्होंने मुझे संतरे-का रस पिलाया, उनके सामने मेरे गलेमें कफ भर गया था, मैं कुछ बोल ही न सका ।

वैद्यजीने कहा—वह मेरी छोरी (लड़की) है । उस समय भी वात-की ही प्रधानता थी । तुम चिंता मत करो ।

×

×

×

दो महीने बाद—

मनोहर वैद्यजीके घरमें ही रहने लगा है । सब रुपये वैद्यजीके पास जमा कर दिये हैं । कम्पाउंडर विदा हो गया है, उसका स्थान मनोहर-ने ले लिया है । वैद्यजी उससे बहुत प्रसन्न हैं ।

एक दिन पढ़ाते समय वैद्यजीने कहा—मनोहर !

—जी !

—देखो, एक रहस्य बताते हैं । यह हमारे यहाँ सात पुस्तसे खल्ला आता है । जहाँ काँटोंके ही पेड़ हों पर उनके बीचमें एक पेड़ बिना काँटोंका हो या बिना काँटोंके पेड़ोंके बीच एक पेड़ काँटोंका हो तो समझ लेना कि उसके नीचे खजाना है । उस पेड़ पर यदि कोई लता हो तो समझ लेना कि खजाने पर एक घोर कृष्ण सर्प है । ऐसी लताको अमृतवल्ली कहते हैं । उस अमृतवल्लीको सोमवारके पुष्य नक्षत्रमें जड़ समेत खोद लेना और उसे कुटकर उसका रस सर्वांगमें पीत लेना । तब अर्द्ध रात्रिको खजाना खोदना । उस रसके प्रभावसे वह सर्प भाग जायगा । और तुम—अमृतवल्ली खोजनेका और खजाना खोदनेके समय पक्षी चरता खजानेका एक-एक मंत्र है । उन्हें मुरझा कर लो । आपने कितना जगत् भूत जादू तो कोई दर्ज नहीं, पर मंत्र न सुनना । इसके बाद वैद्यजीने नन् बलावे और सदाशिव उनको पुराने रस

वैद्यजीने कहा—इस समय जहाँ-जहाँ अमृतवह्नियाँ हैं, सब काँप रही होंगी और सर्प व्याकुल हो रहे होंगे । खबरदार, भूलना नहीं । २०-३० वर्षोंमें सोमवारको जितने पुष्य नक्षत्र पड़ेंगे, सबको पञ्चांग देखकर रट डालो ; चक्र पढ़कर क्या करोगे ! यदि कहीं अमृतवहली दिखायी पड़े तो वहीं रह जाना, जबतक सोमवारका पुष्य न आवे ।

×

×

×

दो महीने बाद—

सायंकालका समय था । अन्धकार फैल चला था । वैद्यजी किसी रोगीको देखने गये थे ।

वैद्यजीके घरके भीतरी कमरेमें मुरली खड़ी थी, उसके पास मनोहर खड़ा था ।

मुरलीने मनोहरका हाथ अपने हाथोंमें लेकर कहा—तुमने इतना प्रयत्न मेरे लिये किया ?

—हाँ ।

—तुम बड़े दुष्ट हो ।

मनोहरने कदाचित् अपनी भलमंसीका परिचय देनेके लिए मुरलीके कन्धे पर एक हाथ रखा और दूसरा उठाया ।.....

तापी वज्रपात हुआ । उस भीषण कड़कती मुरली काँपकर जमीनपर गिर पड़ी । मनोहर चौंककर पीले घूसा । वैद्यजी कह रहे थे—

चमार कहींका ! हमारा आसव, अरिष्ट खाकर, हमारा रस पीकर, हमारे साथ विश्वासघात !

मनोहरने कहा—आपका सब आसव, अरिष्ट, रस, सुरक्षित है । मैंने कुछ नहीं खाया ।

वैद्यजीने कहा—चमार ।

मनोहरने कहा—आप जो कहें, आपको अधिकार है ।

वैद्यजी बोले—तुझपर हमारा कितना विश्वास था ।

मनोहर—उसे बनाये रहिये । मैं इनसे विवाह करूँगा ।

वैद्यजी—मैं तेरा अरिष्ट बना डालूँगा, तेरा काथ बना डालूँगा ।

दूसरी जातिमें विवाह ! असंभव !!

मनोहर—आप रससिन्दूरको सिद्ध मकरध्वज बनाकर बेच देते हैं । यह असंभव काम आप करते ही हैं । एक और सही ।

वैद्यजी—मैं तुझे गुरुचकी तरह काट डालूँगा । मैं तुझे...

वैद्यजीने आगे बढ़कर एक कोनेसे खुलड़ी उठायी और मनोहरपर झपटे । मुरलीने आर्त्तनाद किया ।

खुलड़ीका वार सटीक बैठे, वह धँस गयी, धक्केसे वैद्यजीका हाथ उसकी मूठपरसे छटक गया ।

वैद्यजीने कहा—ले, समाप्त । अच्छा, अब थानेपर चलूँ ।

वैद्यजी आगे बढ़े । रोना—एक वार विश्वासपातीका मुँह देखता चलूँ ।

उन्होंने आँसुमें जलशरी । देखा—खुलड़ी इरवाजिमें एक पहेलेमें धँसी हुई है, रक्तका एक बिंदु भी कहीं नहीं है, मनोहर गायब है । वे काँपने लगे । वे बाहर गये, एक लोटा जल लाये और मूर्च्छित मुरलीके मुँहपर छींटे देने लगे ।

X

X

X

नगरवासी एक एकान्त सड़कपर चालते-चालते मनोहरने कहा—आप रे बाप ! बच गया ! उसको वैद्य किराने बनाधा ! वह तो हूबहू 'मृन्म-कटिक' का बंजरक है । ऐसे बंजरककी ऐसी बन्या ! पर इसी कारण वह क्षम्य है । जाइये ! जमा किया । पर मैं तो अब वही अदाशिव रह गया !

महाशय सदाशिवने चलते-चलते वैद्यजीके यहाँ दो दिनों न जानेका निश्चय किया। सोचा—इस बीचमें पारा बहुत कुछ उतर जायगा।

दो दिनों बाद सदाशिव ठिठकते-ठमकते पानवालेके यहाँ गया। पानवालेने देखते ही पूछा—कहाँ थे छोटे वैद्यजी? बड़े वैद्यजी तो कहीं गये, घरकी ताली और यह चिट्ठी दे गये हैं।

सदाशिवने चिट्ठी खोली। उसमें एक संक्षिप्त पत्र था—“हम आज ऐसी जगह जा रहे हैं जहाँ वृ न आ सके। तुझे क्षमा कर दिया। तेरे रूपोंका चेक साथ है। हमारा शाप है कि अमृतबल्ली तुझे न मिलेगी।”

सदाशिवने मुँह विचकाकर कहा—हुँह! क्षमा कर दिया! मुरलीको लेते गये, क्षमा कर दिया!!

सदाशिवने आकर भकानका ताला खोला और सारा घर छान डाला। एक जगह अपना बिस्तर और कपड़े पड़े देखे। अपने कपड़ोंकी सब जेब देखी। एक कागज का टुकड़ा तक नहीं! घरमें बहुतसे कागज मिले पर मुरलीके हाथका एक अक्षर भी नहीं। तब वह शिलालेख (किसी दीवालपर किसी चीजसे मुरलीके हाथका लेख) ढूँढ़ने लगा। वह भी न मिला। एक कोनेमें कुछ फूटी चूड़ियाँ मिलीं।

काली विदीये रात और लालसे दिनका संकेत किसी प्रेमीने किया था, यह सदाशिवने पढ़ा था। वह फूटी चूड़ियोंका संकेत समझने बैठा। पर बुद्धि काम न देती थी। वह मुरलीको इतनी ... था कि वह चूड़ियोंसे कोई संकेत कर गयी हो। उसे वैद्यजीपर इतना क्रोध आया कि किसीका सिर फोड़ देनेका मन करने लगा।

तब उसे वैद्यजीके शापका पता चला। उसने रात-रात खबर कहा—अब अमृतबल्ली भी खोजगा।

X

X

X

श्रीमान् सदाशिव पाण्डेयजी शामको दिल बहलानेके लिए एक व्याख्यान सुनने गये । विषय था —“संगीतका तंत्रसे सम्बन्ध ।”

वक्ता महोदयने बतलाया कि मारण, मोहन, उच्चाटन आदिकी सिद्धि जैसे तंत्रसे होती है, वैसे ही संगीतसे भी । संगीतके स्वर भी मंत्र हैं । कृष्णजी उन्हींकी सहायतासे गोपियोंको तुल्य लेते थे, यमुनाको स्थिर कर देते थे । इत्यादि ।

इसके बाद वक्ता महोदयने संगीतका वह सब प्रभाव दिखलानेके लिए गाना प्रारम्भ किया ।

गायक महोदय गाते-गाते नमाज पढ़नेवाली मुद्रामें बैठ गये और दोनों हाथोंको चारों दिशाओंमें जब चाहे फेकने लगे । उनके आसपासके लोग दूर खिसक गये । सहसा गायकने बायें हाथकी मुट्ठी बाँधी, जैसे किसीका गला उसमें पकड़ा हो और दाहिने हाथसे उसे हलाल करनेका भाव दिखाने लगे ।

उस समय सदाशिवजी यह याद रहे कर थे कि शास्त्रमें जैसे गंधे और शोड़ेसे कुछ-कुछ हाथ दूर रहनेकी आज्ञा है, वैसे गायकसे के हाथ दूर रहने की आज्ञा है ।

उच्चाटन, मोहन एवं वशीकरणकी क्रिया दिखाकर गायक विश्राम करने लगे ।

सदाशिवको निश्चय हो गया कि कालके प्रभावसे अब संगीतमें केवल उच्चाटन करनेकी शक्ति रह गयी है । वह बहुत अधिक है, इसमें संदेह नहीं ।

उच्चाटनमें उपायने सदाशिवकी शक्तिकी यह जीपण तुनकर समा-द्वार पर जानी पडल उड़कर भाव आये कि अब में शत्रु स्वका गान सुनाता हूँ । बहुत दूर आकर सदाशिवने देखा कि पैरोंमें किसीका जूता

चला आया है। सदाशिवजीको अब संगीतके उच्चाटनमें अणुमात्र भी सन्देह न रह गया और उन्हें वहाँसे भाग आ सकनेका बहुत संतोष हुआ।

संगीतशजीके शानेका पद उन्हें बार-बार याद आता रहा और उनका उच्चाटन बढ़ता रहा। अंतमें वे एकदम विकल हो उठे जैसे पिता या चाचाके मरनेपर, रोज दाढ़ी बनानेवाले विकल हो उठते हैं। उन्हें भय होने लगा कि नगरमें रहनेसे कोई कुकार्य कर बैठेगा। उससे बचनेके लिए उन्होंने उसी दिन वहाँसे प्रस्थान करना उन्चित समझा।

वे विचार करने लगे कि कहाँ जाना उचित होगा। सुंदरवन पसंद नहीं आया क्योंकि वहाँ केले ही केले उत्पन्न होते हैं। हिमालय-पर जंगल कहाँ, वहाँ तो केवल वरफ है जैसे किसी जरूट अग्निहोत्रीकी तापी मुड़ी खोपड़ी। उन्हें उन लोगोंपर बहुत क्रोध आया जिन्होंने भारतके जंगल काटकर जला दिने हाथ ! कितनी अमृतवह्नियाँ जल गईं, कौन कहे ! उन्हें निश्चय हो गया कि भारतके जिन प्राचीन लोगोंको कूडमग्ज और सड़ियल कहा जाता है वे परम बुद्धिमान् थे क्योंकि अवश्य ही अमृतवह्नियों हीके लिए उन्होंने कभी जंगल न काटे थे और जहाँमें वे रहते भी थे।

अन्तमें उनका ध्यान नेपाल पर गया। 'नेपाल' शब्द माचके स्मरणसे उनका हृदय कौन कहे, पैरतक ठंढे हो गये—(उस समय ने नदीमें छुटनीतक पाँच डाले बैठे थे।)—कारण वहाँकी भूमिसे वह सुरली बनी थी जो चीरपाड़ सीखनेवालोंकी दृष्टिमें माल और रत्न भण्ड होते हुए भी विशिष्ट प्रकारकी मानवी थी, जिन्का नियंत्रणतक किताब तने ब्रह्माने दिया था, जिसका अभाव उनकी बड़ी-से बुराईमें परिणतकी उस तत्काल पर कोनेके उर कोसेतक प्रौढ़ क्या जाता था।

नेपालमें जंगलोंकी भी कमी नहीं और कँटीले वृक्षोंकी भी कमी नहीं। रुद्राक्ष वहाँकी उपज तो है !

नेपाल सरकारने वहाँ जानेके लिए पासपोर्टका झगड़ा क्यों रखा है ! बस, वही अमृतवल्ली ! वहाँ जानेके लिए सदाशिवके रोम-रोमसे अधीरता टपकने लगी जैसे कई पीढ़ियोंसे कोरी संस्कृत पढ़नेवालोंके रोम-रोमसे विचित्रता टपकती है। वे तुरत स्टेशनपर जा पहुँचे। गाड़ी आनेमें कुछ देर थी। वे बार-बार घड़ी देखने लगे जैसे पढ़ाते समय प्राइवेट ट्यूटुर देखा करते हैं।

ट्रेन आ जानेपर सदाशिवजीको बहुत दूरपर एक डब्बेमें प्रवेश करती हुई कई महिलाएँ दिखलायी पड़ीं। वे सोलहवें वर्षमें पदार्पण करते-करते दूरदर्शी हो गये थे। साड़ीका रङ्ग और पीठ देखकर उम्रका अंदाज करनेकी सदाशिवजीमें अद्भुत क्षमता थी। उनके पाँव उन्हें बलात् उधर ही खींच ले चले जैसे शयन द्वारा अपहृत जानकीजीको देखकर जयपुरके पैरोंने उसे उनकी ओर खींचा था। ऐसे अथरोंपर कापड़ोंके छेकरोँका उद्देश्य जितना ही असत् होता है, सदाशिवजीका उद्देश्य उतना ही सत् था। वे जानते थे कि जो भी सदाशिवजीके पास आने हुए, किसीके अनुपम सौन्दर्य के लिये आये होंगे, वे सदाशिवजीके पास आना चाहते थे।

पर, हाय रे मन ! तेज दयाके शौकेके माथेपर हिलती कुटिल अलक में भी वह अधिक चंचल होता है। कम-से-कम क्यों तो सदाशिवजीको यही अनुभव हुआ। सदाशिवजीमें मन-ही-मन क्या—उर्दूके कवि किताने झूठे होते हैं ! कासुलके पिनमे दिलको गिरह देदी ! वह भला स्थायी हो सकती है ! हाँ मोड़ी देखके लिद दिल उरासे ललझ सकता है, लटक सकता है, धाँके ला सकता है, पंज बार सकता है, दाँवा पसार कर येठ सकता है; लटपटा सकता है ।...



पर, इसी समय सदाशिवका मन डब्लेमें बैठे लोगोंकी भाषापर आकर बैठक गया । 'ने' के प्रयोगकी वैसे ही उपस्थिति थी जैसे वहाँ भुरलीकी । प्रान्तीय प्रयोगोंका वैसे ही बाहुल्य था जैसा भैरवजीके मन्दिरमें कुत्तोंका होता है । शब्दोंका प्रयोग आँसू मूँरवार वैसे ही हो रहा था जैसे जर्मेनीपर अँगरेजोंके बमोंका हुआ था । वाक्य-रचना वैसे ही शिथिल थी जैसी मारवाड़ियोंकी लोंद होती है । वाक्यका एक अंश दूसरेसे वैसे ही असम्बद्ध था जैसे जिना गाँधीजीसे । तात्पर्य यह कि सब मिलाकर वहाँ वैसे ही भाषा बोली जा रही थी जैसी आजकल हिन्दीके समाचार-पत्रोंके, छोटेसे लेकर प्रधान संपादकतक प्रायः लिखा करते हैं ।

आखिर सदाशिवजी नेपालकी तराईमें पहुँच गये । पाल्पोटें देनेवाले विभागके मुखीने उन्हें उतनी ही दिलचस्पीसे देखा, जितनी दिल्लीकीसे प्राणितत्त्वविदारद किसी नये जीव या जंतुको देखते हैं । उसने उस स्त्री जैसी उपेक्षा प्रकट की जिससे यह कह दिया जाय कि हम तुझसे प्रेम करते हैं । पर जब सदाशिव प्रेमीके समान उसकी दुःखितियों काहल भी पीछे ही पड़ रहा तो उसने नेपालकी सदाशिवके लिए उसी प्रकार स्वतंत्र कर देनेका आश्वासन दिया जैसे इंग्लैंडका अर्थिक प्रधान मंत्री भारतवासियोंके लिये भारतको स्वतंत्र कर देनेका आश्वासन देता है ।

अंतमें तराईके ही एक गाँवमें सदाशिवने एक होपड़ीमें आश्रय लिया । वहाँ सदाशिवने अपनेको वैसे ही एकदम पाया, जैसे महाराज दुर्गिभने आंग्लोंके हिमालयपर पाया था । कदाचित् महाराज दुर्गिभकी यथासाध्य पूर्ण समता प्राप्त करनेके लिए ही उसने एक कुत्ता भी पाल लिया । सदाशिव अपने नाना-नानों वाली जगत्कार की रचना के लिये चरता था किम प्रकार कर्णवारी कुत्तोंके प्रोत्साहनके माफके फलके लिये ।

सदाशिवका कठिणतमपिण्ड सदा उसकी आँसू-गोले रहता था; उसके

जुझे चाटता था, उसका लमाल उठाकर दे देता था, गालियों और बेंतसे जैसे प्रसन्न होता था—उन्हें खाकर भी दुःख हिलता था, भूखा रहकर भी भक्तिहीन न होता था, उसके आसरे मैदानमें या दुकानोंके बाहर घंटों खड़ा रहता था, प्यारसे थपथपाया जाने या देखे जानेपर विविध मुद्राओंसे अपनी प्रसन्नता प्रकट करता था और किसी भी बातकी शिक्षायत्न न करता था। सदाशिव विस्मित था। वह शतको दो कजे उठ कर ब्राह्म-मुहूर्त तक गंभीर चिंतन करता था कि किसी कालेज-कुमारीपर आसक्त फोई कुल-दीपक इन बातोंमें प्रामसिंहका गुरु है अथवा ग्रामसिंह ही गुरु है। शोकवी बात है कि सदाशिवने इस विषयके विचारोंको लिख कर नहीं रखा, नहीं तो कोई विश्वविद्यालय उसे 'डाक्टर' उपाधि दे देता। सदाशिवके ध्यानमें यह बात न आयी हो, ऐसा नहीं; पर उसने सोचा कि अमृतबहरीका संबन्ध मिलने पर जो निधान मिलेगा, उसके व्यवस्था विधान करते समय, उसका बहुत थोड़ा अंश किसी विश्वविद्यालयको कन्या-ओंका वैज्ञानिक स्नानागार बनवाने के लिये दे देनेपर मुझे वहाँसे आन-रेकी डाइरेक्ट की पदवी मिल ही जायगी।

सदाशिव कँटीले पेड़ोंके जंगलोंकी पूछताछ उसी तत्परतासे करने लगा जिस तत्परतासे कहीं नया आया हुआ डाक्टर वहाँके रोगोंकी वरता है। वह ऐसे स्थानोंके नाम बढ़ी सावधानीसे 'नोट' करने लगा जैसे डाक्टर नयी पेटेंट दवाओंके नाम 'नोट' करते हैं।

सदाशिवने एक गुराड़ी सोल ली। वह गुराड़ीकी भाँह जैसी लक और पानीदार भी। सदाशिव प्रसिद्धीके सुननेका नाम नहीं पहले सुन था जो नयाका आर्सेल, बायका प्रयोग कैदरी कर किया था जैसे हिन्दीके कवि लखौर, इन्, श्यामल, पारिके नामोंका प्रयोग उन्हें बिना ऐसे ही नामोंका प्रयोग करते करते हैं। पक्षी चर गुराड़ी प्राणी लियेपर सदाशिवके

रोचें खड़े हो गये जैसे बिल्ली देखकर चूहे के रोचें खड़े हो जाते हैं । महाभारत युद्धको रोमहर्षण कहा गया है—आज सदाशिवने उसका तत्त्व समझ लिया ।

सदाशिव प्रातःकाल उस समय बरसे निकलते, जिस समय दीवाली की रातको लोग अपने घरोंसे दारिद्र्य निकालते हैं । कुत्ता उनके आगे-आगे रहता, उसकी दुम पीछे रहती; जैसे हिंदीके लेखकोंके नामके पीछे उपनाम रहता है । सदाशिवको उसपर—दुमपर नहीं, संपूर्ण कुत्तेपर श्रद्धा होगई थी । उन्हें याद आ गया था कि धर्मने दो ही रूप धरे हैं, एक बैलका, एक कुत्तेका । पर बैल लगड़ा था, अतः वह रूप उन्हें पसन्द न आया । दूसरे, युधिष्ठिर कुत्तेको सखरीर स्वर्ग ले जाना चाहते थे, बैलका इतना भाग्यवान् अभी नहीं हुआ है ।

सदाशिव दिन भर निःशंक होकर अमृतवाली खोजता । उस दिवस पशुओंसे भय न था—खुखड़ीके बल पर नहीं, कांटोंके कारण । कांटोंके अर्थात् रुद्राक्षके जंगलमें, रुद्राक्षोंसे आकृष्ट होकर बैल ही रह सकता है । सदाशिव चाहता था कि कोई बैल मिले । वह देखना चाहता था कि धर्मके दो रूप—बैल और भ्रामसिंह—आसना-धामना होने पर एक दूसरेका अभिनन्दन किस रूपमें करते हैं । अभिनन्दनमें भ्रामसिंहको उक्त सानेके लिये सदाशिवमें उत्साहकी कमी न थी ।

सदाशिवके नक्षत्र अधिक भाग्यवान् जानना था । उस वैचारेके पास तो कुत्ता भी न था, न वह रामगिरिसे कहीं जा सकता था । उक्त यक्षकी तरह वह भी जंगलकी अनेक वस्तुओंमें सुरलीका जाहलन देना करता था, पर अमृतवालीका भ्रम करानेवाली भी कोई वस्तु उसे न दिखाई पड़ती । सदाशिव दिन भर धूम-पिर कर उस समय धर-

की ओर लौटता, जब उलूक-शिष्टुतक उसके सिरपरसे उड़-उड़कर आहारान्धोपणमें निकल पड़ते ।

वियोगमें—मुरलीके और अमृतवह्नीकी प्राप्तिके—सदाशिव शिशिरकालिक मण्डूककी भाँति पचक गया था । एक दिन रातको उसने गुरुपाक भोजन कर लिया । उससे उसे वैसी ही गाढ़ निद्रा आई जैसी आजकलके प्रेमियोंको प्रेमीका पत्र प्राप्त कर आती है या परीक्षा समाप्त होनेपर छात्रोंको आती है या हँडनोट तमादी हो जाने पर उसे लिखने-वालोंको आती है ।

सदाशिवकी नींद टूटी, उसे उठते ही धर्म-राजका दर्शन हुआ । वे उस समय अपने मुख-मंडल पर चार-चार बैठती एक भक्षिकाको मारनेका गंभीर प्रयत्न कर रहे थे । उनका अग्रहस्त भक्षिकाको उड़ाता था और मुख उसे उदरसात् करनेकी चेष्टा कर रहा था । सदाशिव उठकर खड़े हो गये । उन्होंने कहा—हाँ, इसीको कहते हैं धैर्य, इसीका नाम है लगन—धर्ममें धैर्य और लगन होनी ही चाहिये ।

उन्होंने झटपट कपड़े पहने, खुखड़ी ली और बाहर निकल पड़े ।

सूर्य भगवान् ४०० वाटके बल्यकी तरह पूर्व दिशामें दिखायी दे रहे थे । रात भरमें जैसे प्रकृति बदल चुकी थी । वसंत-पवन लताओंपर अँगड़ाइयाँ ले रहा था । काक-कुल आज विशेष प्रसन्न था । कोकिलका बहुत दिनोंसे मौन कण्ठ खुल गया था । गिलहरियाँ पेड़ोंपर दौड़ मार रही थीं, वानर 'लंग जंप' कर रहे थे । भ्रमर भ्रमरियोंको भूलकर गत-गति-दृश्योंकी ओर भागे जा रहे थे ।

अशांतिने भी आज पग सास्ता पकटा । बहुत दूर जाकर उसे एक पाल दिखायी पड़ा । कुल उसपर सीमर चढ़ गया । सदाशिवकी भी अनुपम विधा । १२-२० मिनट चढ़नेके बाद उड़ाई समाप्त हुई ।

सदाशिव मुस्ताने लगा। कुत्ता आगे दौड़ गया। थोड़ी देर बाद उसके भँकनेकी आवाज सुनायी पड़ी। सदाशिवको कुत्तेकी आवाजसे ज्ञात हो गया कि उसने ही किसीपर आक्रमण किया है। वह आश्रयत हों कर धीरे-धीरे उस ओर चला। मोड़से नौंवे हाथ मैदान था। सदाशिवको वहाँ कुछ दूरपर एक छोपड़ी दिखायी पड़ी। उसके बाहर, थोड़ी दूरपर, एक पेड़के सहारे एक स्त्री खड़ी थी; उससे कुछ हट कर कुत्ता खड़ा भँक रहा था। महिलापर आक्रमण न करनेकी कुत्तेकी शिष्टतासे सदाशिव मुखविरत हुआ, पर दूरे ही क्षण उसे क्रोध हुआ। आखिर, भँकनेकी ही अशिष्टता क्यों ? वह खुलड़ी निकाल कर कुत्तेकी ओर दौड़ा।

पर, पास आकर वह एकाएक खड़ा हो गया। उसके हाथसे खुलड़ी गिर पड़ी। उसके शरीरका साथ खून उसके पैरोंमें उतर आया।

महिला उसकी ओर बढ़ी। उसने कहा—मैं जानती थी, तुम आओगे। मनोहरने सआखा होकर कहा—सुरली ! तुम्हारे कपोल आभ इंच पचक गये हैं, उनकी लाली टमाटरोंने तुरा ली है ; तुम्हारा पहले हीसे पतला मन्वदेश अब वास्ति—नास्तिके बीचमें हो गया है—तुम्हारे पैरकी उँगलियाँ ठीक चंपाकी कली हो गयी हैं, तुम्हारा.....

सुरली चुप रही।

मनोहर आगे बढ़ा। सुरलीने चला ही कर चारो ओर देखा।

मनोहर छिटक गया। उसने कालर तोपर एका—एक तुम्हारा विवाह.....

सुरलीने फिर नीलकंठ का निन्दक !

मनोहर अपने अजीबपर गैर अन्तर। कुछ क्षणों बाद उसने कहा—अब अमृतबल्लीका क्या करूँगा। अब धनुरा खोजूँगा। क्या तुमने सम्मति दी थी ?

मुरलीने सिर हिलया ।

मनोहरने उछलकर कहा—तो क्या चिन्ता है ! तुम मेरे साथ भाग चलो, नहीं तो मैं तुम्हारे साथ भाग चूँ। कोई स्थान तुम्हारे ध्यानमें है ?

मुरली मुस्कुरायी ।

मनोहरने आहत होकर कहा—तुम मुस्कुराती हो ! मेरी लक्ष...

मुरलीने कहा—मेरा विवाह

मनोहरने अधीरतासे कहा—उसकी चर्चा बार-बार क्यों करती हो !

मुरलीने कहा—नहीं हुआ है ।

मनोहरने कहा—एँ ! नहीं हुआ है ! तुमको सबसे पहले यही न कहना था ! मान लो, मेरा हार्ट फेल हो जाता तो तुम अब बिधवा न हो जाती !

मुरलीने कहा—पिताजी चाहते तो बहुत थे ।

मनोहरने कहा—गिनकर सौ बार कहो—मेरा विवाह नहीं हुआ है । अरे, बिना गिने ही कहो ! कहो, कहो, कहो ! बार-बार दूंगीकी चर्चा करो ।

पर, मुरलीने न कहा ।

मनोहरने कहा—अभीसे बात नहीं मानती ! हा तो विवाहके बाद क्या हाल होगा ! खैर, तुम एक चिन्ता तो छोड़ आती !

मुरलीने कहा—मौका नहीं मिला । मैं कूँहियाँ ला छोड़ आयी थी ।

मनोहरने मुरलीका मुँह ध्यानसे देखा, फिर कुत्तेकी ओर देखा । वह मुरलीका पैर चाट रहा था ।

मनोहरने कुत्तेको गोदमें उठा लिया । कहा—मेरा मुँह चाट मुँह !! आज सुबह तेरा ही मुँह देखा था । अब जीवन भर तैरूँगा । मुरली ! तुम्हारी कोई सखी है ?

मुरलीने पूछा—क्यों ?

मनोहरने कुत्तेको गोदमें लिये, नाचते हुए कहा—इस कुत्तेके उपकारका भी तो कुछ बदला देना होगा ।

सहसा मनोहरने कुत्तेको जमीन पर पटक दिया । जेबसे एक कागज और पेन्सिल निकाली । कागज पर कुछ लिखकर मुरलीको दिया, कहा,—यह मेरा पता है । रख लो । फिर कोई बिघ्न हो तो चिट्ठी लिखना ।

मुरलीने कागज ले लिया । वह कुछ कहना चाहती थी । तभी एक कोनेसे बैद्यजी आते दिखाई पड़े । मुरली जमीनमें गड़ गई ।

मनोहरने कुत्तेको पकड़ कर कहा—गुरुजी ! प्रणाम । उधर ही रहियेगा, कुत्ता जरा खतरनाक है ।

बैद्यजी चट पट जहाँके तहाँ खड़े हो गये । तब बोले—तू आ गया ? मुरली तू जा ।

मुरलीके जानेपर मनोहरने कहा—जी हाँ । सोचा, कदाचित् अशुभ—आसवकी कमी हो गयी हो ! यह शरीर हाजिर है ।

गुरुजीने ध्यानसे मनोहरको देखा, तब पूछा—मनोहर ! मुरलीसे विवाह करेगा ?

अब मनोहरने ध्यानसे गुरुजीको देखा ।

गुरुजी बोले—पत्, गद् बता कि हममें कोई भी दोष हो, तू तैयार है ?

मनोहरने कहा—आप किसीके भी पुत्र हों, कहीं कों भी हों, बिना माता-पिताके उत्पन्न हो गये हों, कुछ भी हो, मैं विवाह करूँगा । आप अनुमति न दें तो भी करूँगा ।

बैद्यजी कुत्तेको भूलकर मनोहरके पास आ गये । उसके कंधेपर हाथ रखकर कहा—तो आज अर्ध रात्रिको सुहृत्स है ।

मनोहरने अत्यन्त विनयसे पूछा—आप शव—साधन तो नहीं कर रहे हैं ?

वैद्यजीने विस्मित हो कर पूछा—शव-साधन क्या ?

मनोहरने जरा रुककर कहा—वह वैद्यकसे मिलती-जुलती एक क्रिया है । उसमें भी शवको जीवित किया जाता है ।

वैद्यजीने उत्सुकतासे पूछा—तू जानता है ? हमें भी सिखा देना ।

मनोहरने कहा—मैं आज ही विवाह करूँगा ।

×

×

×

विरहियोंको अदक्षिण, दक्षिण समीरण, कङ्हार—काननका मकरंदा—शव पिघे, सखलित—पद मद्यपकी भाँति चल रहा था । बीच-बीचमें पुष्पों-के प्याले मुखसे लगाता चलता था । कोकिलका पञ्चम स्वर अविच्छिन्न था । पटपद मृगामदके अनुसंधानमें व्यग्र थे । पूर्व—क्षितिजपर काल—ऐन्द्र जालिकने कंडोल ( बाँसकी पिटारी ) खोल कर उसमेंते एक रक्तवर्ण गोलक बाहर निकाल लिया था ।

उसी समय झोपड़ीसे वर और बधू निकली । रक्तवर्ण गोलककी आभा बधूके कपोलोंपर पड़ने लगी ।

वरने पूछा—मुरली ! वैद्यजीने विवाह कैसे कर दिया ?

मुरलीके कपोलोंका रंग और गहरा हो गया । उसने नीचे देखते हुए कहा—कई दिन पहले मेरी एक —रिश्तेकी बहन किसीके साथ...

मुरली मनोहरने बीच ही में कहा—उसका जीवन नन्दन—कानन बनाने चली गयी ? यही न ? तो ?

बधूने कहा—अब हरा जातिसे बहिष्कृत हैं ।

वरने सोच-सूच कहा—उसे बहुत पहले ही जाना चाहिये था । वैद्यजीमें वह सम्बुद्धि उत्पन्न करनेके लिये तुम्हारे रिश्तेदारोंके यहाँ एक भी नहीं न रह जाती, तब भी कोई हल न था ।

बधूने अपने हाथोंके मुकुटस्तरी स्वामीका मुँह कतर कर दिया ।



कुछ देर बाद बधूने पूछा --

अमृतबल्ली तो तुम्हें नहीं मिली ?

वरने गंभीरतासे कहा—कल मिल गयी ।

बधूने उत्कण्ठासे पूछा—सच ?

—हाँ । दो कँटीले पेड़ोंके बीचमें एक निष्कण्टक पेड़के सहारे  
अमृतबल्ली मिली । एक ओर मैं, एक ओर वैद्यजी; बीचमें तुम ।

तभी बसन्त—समीर का एक झोंका आया । अमृतबल्ली मानीं  
उसके स्पर्शसे क्षणभरमें पुष्पित हो गयी । उससे ज्वमेलीके फूल  
टपकने लगे ।

## प्रोफेशनल

कहा जाता है कि बारह बरसमें घूरेके भी दिन फिरते हैं। इस महा-युद्धमें यह बात सत्य सिद्ध हुई।

पंजाबके एक गाँवमें हवाई अड्डा बना। उस गाँवमें स्टेशन भी बना और कालका मेल भी वहाँ सात मिनट खड़ी होने लगी। स्टेशनके बाहर सिगरेटकी महकसे भी घबरानेवाले, तम्बाकूका किन्हीं भी रूपमें स्वर्ध न करनेवाले किन्हीं सरदारजीने एक होटल खोला। वह कुछ स्टेशनोंके बुकिंग आफिसोंकी तरह था और उसमें 'शटक' के मांससे बने पदार्थ और शराब विक्रता था। शराब दो तरहकी थी—बिलायती और देशी। देशीके दो प्रकार थे—एक देशी डिस्टिलरियोंमें बनी, दूसरी सरदारजीके तस्वानधानमें बनी। पर, सरदारजी यह बात किसीसे कहते न थे—अपने शराबके डिस्टिलरियोंमें थे। हाँ, सिगरेट भी वहाँ विक्रते थे। उन्हें लड़का बेचता था, वही उन्हें छूता था।

पौषके महीनेकी एक रातको १२ बजकर ९ मिनटपर उक्त होटलके दरवानेपर एक युवक आकर खड़ा हुआ। उसको भीतर शान्त।

माँस एक टेबुलपर और ३-४-५ के एक रातको बसता था। वे मिडिलमें गोशाकमें थे। दुल्हीके नीचेमें जानकी जाती जाती अगोपनी और न थी हुई थी। वे दोहे घण्टके थे, वे कुछ निकलवा हुआ था। उसमें खानेके टेबुलपर यह लिखाकी एक नाला, सोपानाएकी १० नाला, एक फ्लेम फार पोस्टो ( पीमें बने, बाक और फार्थे विन्ने तर्कें खाने ), एक फ्लेममें कटे प्याज और एकतरके लुकड़े तथा मिर्च ( सिगरेटके

राखदान ) था । उनके दाहिने हाथमें शीशेका गिलास और बाँधमें सिगरेट था ।

दूसरे टेबुलपर भी कई बोटलें और खानेका सामान था तथा उसे घेरे तीन आदमी थे ।

दरवाजेके पास एक टेबुलके सहारे स्वयं सरदारजी थे । टेबुलपर रसीदबुक, पेन्सिल और ड्रिंकर्स नाइफ ( एक तरहका चाकू, जिसमें शराबकी बोटल खोलनेका साधन खास तौरसे होता है ) था ।

भीतरवालोंने भी एक वाग बाहर खड़े युवककी ओर देखा और तब अपने काममें संलग्न हो गये । सरदारजीने युवकका स्वागत किया—  
आओजी पाही ( भाई ! )

युवक भीतर हुसा । वह २५-२६ वर्षका था—खिंचा, सुडौल शरीर, चेहरेपर लाली और परिश्रम तथा निराशाका आभास । वह भी मिलिटरी पोशाकमें था ।

उसने भीतर आकर सरदारजीसे पूछा—सोनेको जमाह मिल सकती है ?  
सरदारजीने कहा—जुरुर, जुरुर ! सनाब ( असनाब ) कहाँ है ?

—स्टेशन मास्टरके यहाँ ।

—जुरुर ! सब कुच्छ मिल सकदा ऐ ( सब कुछ मिल सकता है ) । खाणा खाओगे ?

—हाँ

सरदारजीने हाँक लगाई—ओ रामसोमई ( रामसिंह ) इत्थो आ ( यहाँ आ ) ।

पहले टेबुलपर जो सज्जन थे उन्होंने दाथका आभन चिमरेट जोरने फर्शपर दे मारा, गिल्लतल्ले एक लाथा घूँट लेकर उसे टेबुलपर रखा । दो-तीन दूतल्ले प्याजके भँट्टे भरि और उन्हें कच-कच भत्तले उठ साईं

हुए। वे सरदारजीके टेबुलके पास आये, जरा लड़खड़ाते। उन्होंने युवकको नीचेसे उपरतक देखा, रा और आँखोंको आधा बन्द कर, गर्दन जय टेढ़ीकर, दाहिने हाथसे अपना सीना ठोंककर, युवकसे बोले—मुझे पिछा-गता है ? हम है कतान साव । तू केया (क्या) है ?

युवकने उन्हें देखा और मुसकराहट रोककर गम्भीरतासे कहा—हवलदार ।

—हौलदार ! ऐं ! हमको सलाम कर ।

युवकने फौजी सलाम किया ।

कतान साधने खुश होकर कहा—तुम भोत अच्छा खोते (गधे) दा (का) बच्चा है । आ, हमारे टेबुलपर आ, शराब पी, खाणा खा, जितना चाहे पी, पीते पीते ब्वेहोश हो जा, अप्पणे बापको भूल जा, आ !

कतान साहब हवलदारको खींचकर अपने टेबुलपर ले गये और चिह्लाये— एक गिलास !

सरदारजीके 'रामसींग'ने तुरत लख टेबुलपर एक गिलास रखा और पूछा—होर ( और ) ?

कतान साधने रामसिंहके लपटे हुये गिलासमें ड्राइ जिन ढालते हुए दूसरे हाथसे रामसिंहको जानका इशारा किया । उसके चले जानेपर मुँहसे कहा—अभी ( अभी ) ज्जाओ ।

हवलदारने कतानका हाथ पकड़कर कहा—बस ।

कतान साव बोले—च.च.च.च. ! बस ? बसके क्या मानी ?

और उन्होंने अपना गिलास एक बारमें खाली कर उसे फर्शपर दे मारा । दूसरी टेबुलके लैंगोंके चौककर एक बार हपर देखा और फिर पीने लगे ;

सरदारजीने कतान सावके सामने दूसरा गिलास लाकर रखा और

अपने टेबुलपर जाकर उनके बिलमें लिखा—एक कंच (काँच) का गिलास, बरह आने ।

हवलदारने कतान साबके गिलासमें ढालना शुरू किया । कतान साब बोले—बोतल मुँहसे लगा दे साकी ! बोतल !! सुनो—

फिक्रे-मीना क्यों है साकी,

क्यों तब्यशे-जामूँ है ।

तू लग्गा दे मुँहसे खुम

पीना हमारा काम है ॥

हवलदारने कहा—फिरसे !

कतान साबने शेर फिर पढ़ा और तब दोनोंने गिलास उठाकर मिलाये । हवलदारने कहा—दु थोर हेस्थ !

कतान साबने कहा—नो बलडी ! हमारी भेग साबका हेस्थ ।

दोनोंने कई घूँट पीकर गिलास रखे ।

कतान साबने पूछा—दुद्रीपर ?

—ना ।

—भाग आये ? फ़ौंच लीव ?

—ना ।

—तो ?

—बरखास्त ।

—नचो ? पासमें कोई किताब या अफसर पकड़ना मस्त ?

—नहीं ।

—किसी अफसरकी ससुक (भाशूक) मार दी (फँसा ली) ?

—नहीं ।

—गानमेंस ! भाकिर !

—हवलदारीके बाद हवाई जहाजकी तालीम ली । फिर मन नहीं लगा ।

—तब ?

—कानका मैल आँखोंमें लगाया । आँखें लाल हो गयीं । मैंने कहा—मुझे दिखायी कम पड़ता है ।

—तब ?

—डाक्टरी हुई । दवा मिली । उसे फेंक दिया । कानका मैल लगाता रहा । अन्तमें बरखास्त ।

—तब मिलिटरी ड्रेस कैसे पहने हो ?

—दो महीनेकी मोहलत मिली है । अगर आँखें अच्छी हो गयीं,

—अच्छी हो जायँगी ?

—घरपर मन न लगा तो ।

कप्तानने हवलदारकी पीठ ठोकी । कहा—बड़ा होशियार है तू !  
बीबी बहुत खुशसूरत है ?

—शादी नहीं हुई ।

—एँ ! तो घर क्यों जाता है खोतेदा बच्चा ! पलटनमें मशूक  
कम हैं !

हवलदारने म्लान मुसकुराहटसे कहा—एक लड़कीसे प्यार था ।

कप्तानने उसकी पीठ जोककर कहा—शाबाश मेरे शेर ! फिर ?

—उससे प्यार था ।

—तब शादी क्यों नहीं हुई ?

—वह कहती थी कि तुम मेरी माँसे कहो । मैं कहता था कि तुम  
कहो ।

कप्तानने माराज होकर कहा—गधा नहीका ! मुझसे कहा होता,  
मैं कह देता ।

—इसी बीच एक दूसरा आदमी आ पहुँचा। लड़कीकी माँने मुझसे कहा कि उसकी शादी तय कर रहे हैं। मैं चुप रहा, वह भी चुप रही।

कप्तानने कहा—नतीजा यह हुआ कि उसकी शादी हो गयी।

—नहीं, शादी नहीं हुई, सिर्फ मँगनी हो गई।

—तो अब भी मौका है। तू पूरा गधा है। इसी लिये पलटनमें गया था ?

—हाँ

—और वहाँसे भी भागा। अगर घर भी मन न लया ?

—देखा जायगा।

—तो तुम अमेन्च्योर ( शोकसे करनेवाला ) आशिक है, प्रोफेशनल ( पेशेवर ) नहीं !

—मतलब ?

—आशिक दो तरहके होते हैं—अमेन्च्योर और प्रोफेशनल, यह तो जान गया न !

—हाँ।

—एक बातमें अमेन्च्योर और प्रोफेशनल बराबर होते हैं। दोनोंके दिलपर 'टु लेट' (केरायेपर देना है) की सख्ती लगी होती है। दोनों अपनी पसन्दके केरायेदार उसी ठहराते हैं। पर, अमेन्च्योर एक ही बार और एक हीकी ठहराता है, प्रोफेशनल एकबारमें बहुतोंको भी ठहरा लेता है। अमेन्च्योरमें यह सख्ती नहीं होती। वहाँ केरायेदार ही जब तबीयत लेती है चप्य जाता है।

हवलदार बोला—दुलमें तो सभी अमेन्च्योर होते हैं।

—नहीं ! प्रीयतका फर्क होता है। एक आपसी समझना

सीखता है कि खुदको मजा मिले, दूसरा इसलिए सीखता है कि दूसरेको मजा देकर उसकी कीमत ली जाय ।

हवलदार सोचने लगा ।

कप्तान साब बोले—देख बेटे ! प्यारके पन्थमें अमेच्योर बहुत कम होते हैं, शायद नहीं होते । क्योंकि दिलसे केराबेदारके जाते ही अमेच्योर मरने लगता है—उसका दिल जीरो—शून्य—हो जाता है । अकसर उसे दूसरेसे भरना पड़ता है । जीरोपर एक और आनेसे क्या होता है, जानता है ! दस । जहाँ एकसे दो हुए कि दिल घर नहीं सराय हो जाता है । फिर उस दिलवाला प्रोफेशनल हो जाता है ।

—लेकिन

—हाँ, इतनी बड़ी दुनिया है । कहीं-न-कहीं अमेच्योर होगा ही । लेकिन कितना मुश्किल है अमेच्योर रहना, यह समझमें आ गया ?

—हाँ ।

—अब तू बला, अभी तो तू अमेच्योर है । अब क्या करेगा ? बना रह सकेगा अमेच्योर ?

हवलदार चुप रहा ।

कप्तानने कहा—प्रोफेशनलोंको यह शंका नहीं । पर प्रोफेशनल होना बड़ा कठिन है ।

हवलदार हँस पड़ा ।

कप्तानने कहा—दाँत क्या निकालता है । अच्छा मैं कुछ सवाल पूछता हूँ, जवाब दे ।

हवलदारने गौन शम्भति दी ।

कप्तानने पूछा—हर एक माइक्रोकॉपीके पीछे तेरा दिल दौड़ सकता है ?

—नहीं ।



—उसका घर देखने उसके पीछे जा सकता है ?

—नहीं ।

—उसकी गलीमें दिनभरमें सौ-पचास चक्कर लभा सकता है ?

—ना ।

—उस गलीके लोगोंको कुछ शक हो, वे कुछ पृच्छें तो कुछ बहाना बना सकता है या उन्हें अपने कामसे लगनेकी सलाह दे सकता है ?

—ना ।

—दिनमें कई बार कपड़े बदल सकता है, जेबमें छोटी कंधी और शीशा रख सकता है ? किसी दोस्तसे अपनी मुहब्बतके इजहारका खत लिखाकर माशूकके सामने फेंक सकता है ?

—नहीं ।

—उसे सुनाकर फुरकतके गाने गा सकता है ?

—नहीं ।

—माशूकके बाप वा भाई या किसी औरके जूते खा सकता है ?

—राम कहो ।

—माशूकके ?

—इसपर तौर किया जा सकता है ।

—बीच सड़कर खोसे ।

—नहीं ।

—इसके बाद भी खत लिख सकता है, ऑख मार सकता है, टक-टकी ख्यातार देना सकता है ?

—नहीं ।

—और प्रीतिशेन बनना चाहता है, यह भी करता है ? भाषा कर्तरी का । और एक बात तो अभी बाकी ही है ।

—क्या ?

—अपने बापके जूते खाना और घरसे निकाला जाना ।

हवलदारने उठकर, हाथ जोड़कर कहा—तुम्हारी है कप्तान साव ! मैं प्रोफेशनल होनेसे वाज आया ।

कप्तान सावने अपना सीना ठोककर कहा—इधर देख बेटा । प्रोफेशनलों का भी बाप हूँ ।

—तो आप ?

—हाँ, हाँ; लाल-जूता सब । अपने बापका भी, दूसरोंके बापोंका भी । अब उस्ताद हो गया हूँ । एक बार तो सभी कामोंमें दिक्कत होती है ।

—लाइये आपमें पैर छू लूँ । आप तो पहुँचे हुए हैं ।

—दिक्कतें जितनी ज्यादा होती हैं बादमें मजा उतना ही ज्यादा मिलता है । तुम प्रोफेशनल होते तो क्या वह लड़की हाथसे निकल जाती ! वह खना बदनखरत खवान ! अरे, तू तो बस महीने भरमें प्रोफेशनल हो सकता है । थोड़े दिन मेरी शागिर्दी कर ।

—माफ कीजियेगा ; दिलमें टिमिल नामकी चीज ही नहीं है ।

—सुन, तेरे ही पैरा कोई गया था । वह एक लड़कीसे प्यार करता था । उसी चीज में पहुँच गया । मैं ठहरा प्रोफेशनल । मिनटोंमें बाजी मारी । वह उलटका पड़ा देखता ही रह गया ।

—शादी कर ली ?

—नहीं करने आया हूँ । लड़की क्या है, चाँदका टुकड़ा है । बस कुछ दिखाऊँगा । मेरी शादीमें शरीक होना । तेरे दो-तीन दिन मजेसे कर जायेंगे ।

—कहाँ खलना होगा ?

—बस यहाँसे तीन कोसपर, पहले ही गाँवमें । लड़की यहाँ आ गयी है । वेने वे रहनेवाले तो करूर गाँवके हैं । लड़कीका नाम चञ्चल, उसके बापका नाम अमरसिंह, उसके बापका नाम कीरतसिंह, उसके बापका—

हवलदारने अपनी दोनों कुहनियाँ टेबुलपर रख लीं और सिर झुंथेलियोंमें । कप्तान साधने उसका कन्धा झकझोरकर कहा—क्या जरा-सीमें टें बोल गये । लो आंर पियो ।

हवलदारने सीधे बैठकर पूछा—तो शादी कब है ?

—परसों । चल थार, मजा रहेगा ।

हवलदार उठ खड़ा हुआ । बोला—कप्तानजी ! अब मैं अपना सबाब ले आऊँ, फिर पिऊँगा ।

—नींद आ रही है ?

—हाँ ।

—तो जा मेरे शेर, ले आ । फिर पियंगे डटके । परसोंकी पक्षी, क्यों ?

हवलदार लड़खड़ाता हुआ बाहर निकला । पर स्टेशनकी ओर न जाकर एक ओर अँधेरेमें चला ।

सरदारजीने कप्तान साधसे कुल कहा, वे उठकर दरवाजेपर आये और चिढ़ाये—ओ टोड़ी बच्चा ! अबे आज ही मेरी समुशालमें चला जायगा ? अच्छा सलाम कह देना ।

हवलदारने एक बार पीछेकी ओर देखा, पर आगे बहना न रोका ।

\*

\*

\*

पौ फटते-फटते हवलदार एक गाँवमें प्रविष्ट हुआ । गाँवकी सीमा-

पर ही उसे एक किसान मिला जो जुएके नीचे, दो जँचे, दृष्ट-पुष्ट बैलोंको हाँकता खेतोंकी ओर जा रहा था ।

हवलदारने रुककर उससे कुछ पूछा । किसानने उसे ध्यानसे देखा । उसे कुछ सन्देह हुआ । उसने पूछा—तुम मोहनसिंह ?

हवलदारने कहा—हाँ ।

किसानने उसे कुछ बताया और उसे देखता हुआ आगे बढ़ा ।

मोहनसिंह गाँवके एक गलियारेमें घुसा । आगे जाकर एक नीमके पेड़के नीचे वह ठिठका । कुछ देर बाद उसने जरा गला साफ किया और पेड़से सटे मकानके दरवाजेपर थाप दी । फिर, भीतरसे कुछ आहट सुन पड़ी । कोई चलकर दरवाजेतक आया । पूछा—कौन है ?

हवलदारने फिर गला साफ किया और कम्पित स्वरमें बोला—मोहन ।

दो मिनट वीते । मोहनने फिर थाप दी । भीतरसे किसीके बोलनेकी क्षीण शब्द-तरंग मोहनके कानोंसे टकरायी । कोई फिर आया, उसने दरवाजेका हुडका हटाया और दरवाजा खुला ।

दरवाजा खोलनेवाली वृद्धाने आँखें गड़ाकर देखा और कहा—  
मोहन तू ! मैं तो समझी थी,

मोहन वृद्धाको प्रणाम किया, और पूछा—माँ, भीतर आजँ ।

वृद्धाने मोहनका हाथ पकड़कर भीतर लीन लिया, उसकी पीठपर हाथ फेरते हुए कहा—तू तो अथायक चला गया, कहाँ था ?

—पलटनमें ।

—छुट्टीपर आया है ?

—नहीं, छोड़ आया ।

—कितना दुःख हो गया है ! बहुत तकलीफ थी ना !

—हाँ ।

—मैंने तो तुझसे शादीको कहा था ।

—अब फिर कहो माँ !

.....

.....

.....

—कहो माँ ! मैं सुनकर ही हटूँगा, कहो ।

—उसने तो दरवाजा भी नहीं खोला !

—आवाज पहचान ली थी ।

—अच्छा तू उधर जा । मैं आती हूँ ।

:०:

:०:

:०:

दूसरे दिन खबरे कोई नो बजे उस गाँवसे एक बैलगाड़ी निकली । मोहनसिंह उसमें था । उसके पास ही एक युवती बैठी थी ।

गाड़ी चली । एकान्तमें आनेपर मोहनसिंहने बहुत धीरेसे युवतीसे कहा—इतनी नाराज थीं कि दरवाजा भी नहीं खोला !

युवतीने सिर झुका लिया ।

मोहनने कुछ और कहा । सिर और झुक गया ।

थोड़ी दूर जानेके बाद कई बैलगाड़ियाँ आती दिखायी दीं । मोहनसिंहने सावधानीसे देखा और युवतीसे कुछ कहा । उसने भारी नादर अच्छी तरह ओढ़कर घूँघट कर लिया ।

बैलगाड़ियाँ पास आ गयीं - मोहन खड़ा हो गया और पुकारा—सलाम कप्तान साहब !

अगली गाड़ीपर बैठे कप्तान साहब चौंके, इधर देखा और उठकर बोले—कहो बेटे । खूब आये ! कहाँ चले गये थे ?

मोहनने हँसकर कहा—इधर ही आ गया । संयोगसे कल मेरी शादी हो गयी ।

कप्तान साहब आश्चर्यमें पड़े; फिर बोले—तो अब अगेच्छोर नहीं रहे ?

मोहनने कहा—आपके कुछ घण्टोंके सत्संगमें ही प्रोफेशनल हो गया !

—तो अब बैठे, सुख भोगोगे । तो लौटो न ! मेरी भी बारात कर दो ।

—बहू साथ है ।

—अच्छ यह बात !

—जी हाँ, मिलिटरी आदमी ठहरा । सब काम चटपट !

—तो बहूको दिखा दो !

—जरूर । लेकिन एक शर्तपर ।

—क्या ?

—नाम वाली करके मेरे गाँव आइये, मेरे मोहयान होइये । तब आप भी देख लीजिये, मैं भी देख लूँगा । आपने वादा किया था ।

कप्तान साहब खिलखिलाकर हँसे । साथ ही बैलगाड़ियोंकी ओर संकेत कर बोले—घराती भी साथ आवेंगे !

—जरूर, आप सब भाइयोंसे बिनती है; जरूर आवें ।

—पता ?

मोहनने अपना नाम और पता बताया । गाड़ियाँ दो दिशाओंमें आगे बढ़ीं । मोहनने चिड़ड़ाकर कहा—आना जरूर कप्तान साहब ! मेरा नाम हवलदार मोहनसिंह प्रोफेशनल !

कप्तान साहबका अट्टहास सुन पड़ा ।

मोहनसिंहने अपनी पत्नीके कदर—कप्तान जब शारी करने जा रहे हैं ! लौटकर हमारे मोहयान होंगे ! बहूकी खातिरदारी कुम्हारे किस्म दे ।

बहूने मुस्कराकर पतिकी ओर देखा और स्निग्ध नीचा कर लिया ।

कप्तान साहबकी बरात गाँवमें प्रविष्ट हुई । बैलगाड़ियाँ रुकीं ।

कुछ देर कप्तान साहब रुके रहे । तब किसी जाते किसानसे पूछा—  
करकरके अमरसिंहका कौन भकान है ?

—वो रहा नोमके नीचे । क्यों ?

—आज उनके यहाँ शादी है न ?

—कल हो गयी । लड़की अपनी समुराल गयी, उसकी माँ करकर  
गयी । यहाँ घरमें ताला बन्द है ।

मिनट भर बाद एक बरातीने पूछा—भला कहाँ हुई ?

—हो गयी जी ! मोहनके साथ, हवलदार मोहनसिंहके साथ ।

## ‘मड़ा-फेला’

### लेखककी सूचना—

समासके चक्रमें पड़कर ‘मड़ा-फेला’ विशेषण हो जाता है और उसका अर्थ होता है—शवको फेकनेवाला । जैसे ‘मड़ा’ का अर्थ ‘शव’ और ‘फेला’का ‘फेकना’ होता है । बंग-भाषाके इस शब्दके दोनों अर्थोंपर ध्यान रखते हुए, इस कहानीका यह नामकरण किया गया है ।

काशीमें १००-१५० ‘मड़ा-फेला बामुन’ [शवका वहन और दहन करनेवाले ब्राह्मण] हैं । ये केवल काशीमें ही हैं और बंगाली ही इनका उपयोग करते हैं ।

ये समाज-बहिष्कृत हैं । इनका पानी नहीं चलता ।

धनी व्यक्तियोंकी शवयात्रामें ये अलङ्कार मात्र होते हैं, अर्थात् आगे-आगे खोल-मजीरा बजाते और अक्सरके उपयुक्त वैराग्यपूर्ण पद गाते हुए चलते हैं । अपना असली काम ये वहाँ करते हैं, जहाँ शव-बाहक कोई न हो या किसी लावारिसकी सद्गति करनी हो ।

अन्तिम स्थितिमें अब अ-बंगीय भी इनका उपयोग करने लगे हैं ।

अब कहानी पढ़िये ।

---

सेठ मटरूमल भैरवगसकी पाठशाला और क्षेत्र काशीमें तो प्रसिद्ध है ही, बाहर भी है । ग-जाने किस प्रकार, ये लोग मँचते हुए उससे ही आकर तुरस जाते हैं, जिन्हें उनके दरवाले अपने लिए थिलकुल निकम्मा



समझकर एक लोटा और एक धोती थमाकर, पढ़नेके लिए काशी विदा कर देते हैं। जिस प्रकार उक्त लोग विना टिकट रेलकी यात्रा समाप्त कर, काशी स्टेशनपर उतरकर, सीधे उस 'श्रेत्र च पाठशाला' के दरवाजेपर आकर खड़े हो जाते हैं उससे ज्ञात होता है कि सेठ मटरूमल भैरूवगसने भारतके सब स्टेशनोंपर अपने एजेंट रख छोड़े हैं।

भाषा-तत्त्वके गोताखोरोंके लिए 'मटरूमल भैरूवगस' नाम बहुत आकर्षक और मननीय है। एक भाषा-तत्त्व-वित्ने 'भैरूवगस' की व्याख्या इन शब्दोंमें की है—

“इस नामके स्वामी मारवाड़के हैं, यह तो 'श्रेत्र च पाठशाला' की बाहरी दीवाल पर लगे ५ फुटके पत्थरसे ज्ञात हो जाता है। यह वंश बहुत प्राचीन भी ज्ञात होता है क्योंकि इसके नामोंपर अब भी मुसलमानी प्रभाव स्पष्ट है। 'वगस' और कुछ नहीं 'वगस' है, जैसे मालावच्छ। अकबरकी कृपासे मारवाड़के लोगोंका मुसलमानोंसे धार स्वयं अकबरसे भी यत्नसे नास्तिक घनिष्ठ संबंध स्थापित हो गया था। अकबरकी कृपाके प्रति कृतज्ञता प्रकट करने लिए वहाँके लोगोंने अपने नाम भी मुसलमानी नामों से मिश्रित करने शुरू कर दिये थे। सेठ मटरूमल भैरूवगसके वंशजोंका मुसलमानोंसे किस प्रकारका संबंध था, इसकी ज्ञान-योग हमारा उद्देश्य नहीं। किसीकी कौतूहल हो तो उनके शत्रुओंसे मिले।...

भैरूका शुद्ध रूप भैरव है। अनुमान होता है कि पहले मारवाड़में भैरव-पूजा बहुत प्रचलित थी। अतः पूरे नामका शुद्ध रूप है— भैरववच्छ।

'मटरूमल'की व्याख्या नहीं देनेमें नहीं आयी। आशा है, कोई भाषा-तत्त्व ज्ञान् इसपर भी 'अपने ताडट' पाड़ेगा।

मटरूमल भैरवगसने यह 'श्रेत्र च पाठशाला' विद्या विधियोंमें पढ़कर

बनवायी थी, यह हमें ज्ञात नहीं। अर्थात् प्रामाणिक कारण ज्ञात नहीं। कुछ लोगोंका कथन है कि सेठजीको उनकी जातिके लोगोंने ईर्ष्याके कारण कुछ अर्थ-दण्ड दिया था; कुछका कहना है कि चंदा करके यह पुण्य कार्य किया है और चंदेमेंसे आधा बचा लिया और 'क्षेत्र व पाठ-शाला'पर अपने नामका पत्थर लगावा लिया।

'क्षेत्र व पाठशाला' दोनोंका काम एक ही मकानमें सम्पन्न हो जाता है, इसके अतिरिक्त सम्पन्न होनेवाले कार्योंकी फेहरिस्त हम पेश न करेंगे; प्रसंगतः जो कुछ ज्ञात हो जाय, उससे ही पाठक संतोष करें।

वह मकान गङ्गाजीके पास और विश्वनाथजीका दूरका पड़ोसी है। उसके ये गुण जाँचकर ही उसका संग्रह किया गया था। उस मकानके गुण और अद्युगुणोंकी जाँच सटरूमल भैरूबगसने उसी तत्परतासे करायी थी, जिसे संसारसे अपने भावी जन्मकार्य करायी थी।

वह मकान पूरने कुछ छुका हुआ, पासमें संगीन और भीतर जानेसे सुरंग जैसा ज्ञात होता है। सुरंग पार करनेपर छोटा-सा चौक मिलता है, जिसके तीन ओर कोठरियाँ हैं और एक ओर सीढ़ी और पैखाना तथा कल। वह मकान पँचतछा है।

वह मकान किसी महाराजाधिराजने, किसी विशिष्ट इस्त्रीनियरसे अपनी असुर्यपत्न्या पवित्रोंके लिए बनवाया होगा। वह मकान सूर्यदेवकी आँखोंमें धूल डालकर उनकी दृष्टि बरही मर्दाने बचा जाता है। लक्षणों और व्यक्तनासे अपरिचित लोग निश्चित कर लेंगे कि उस मकानमें कवि पहुँच जाते होंगे, क्योंकि 'जहाँ न पहुँचे रवि, वहाँ पहुँचे कवि' यह प्रसिद्ध है; पर इन कवियोंकी ओरसे इसका प्रतिवाद कर देते हैं।

उन मकानकी नीचेकी कोठरियोंमें विद्याके लार्थात् संस्कृत विद्याके अर्थात् शब्दों और प्रति कर्ष दो-एक अधियोंकी वार्षी तहोंमें निकलते

करती है। यह उन अर्थियोंका दोष है, मकान या उसके मुनीमजीका नहीं, जो पाँचवें तल्लेमें निवास करते हैं।

मटरूमल मैरूँवगसने जिस व्यक्तिको अपनी दारिकाका दान किया था, उसके लघुभ्राता श्रीमान् चिथरूमल चूड़ीवाला जब अपनी समस्त संपत्ति और हत्-पत्रकी प्रत्येक पैखुरी लुटाकर भी सामान्य स्त्रियोंतकका प्रेम और सहानुभूति प्राप्त न कर सके और इसी शोकमें फाटकेके बाजारमें भी जाना बंद कर चुके यहाँ तक कि दूकानदार मानका मुँह देखनेसे बचने लगे; तब मैरूँवगसजीने अपने जामाताको और कृतकृत्य करनेके लिए उन्हें (चिथरूमलजीको) अपनी 'पाठशाला व क्षेत्र' का मुनीम बनाकर भेज दिया।

चिथरूमलजी ऊँची दृष्टिके आदमी हैं। यह बात उनकी गलीके मकानोंकी स्त्रियाँतक शपथपूर्वक कह सकती हैं। रास्तेमें, चलते समय, वे इधर-उधर तभी देखते हैं, जब किसी स्त्रीसे टकरा हो जानेकी आशंका होती है। और मानों उसे सावधान करनेके लिए ही वे अपनी जेबमें पड़े सपथे खनखनाने लगते हैं। वे शायद डायरी भी लिखते हैं क्योंकि उस समय अपनी घड़ी भी बार-बार देखा करते हैं।

ऐसे शुर्णा चिथरूमलजीके लिए एक क्षेत्र और पाठशालाको समझालेना क्या कठिन था! उन्होंने देखा कि हमार विद्यार्थी आँसू बंद करके धातुएँ रटते हैं। उन्हें संशेह हुआ कि रटते समय वे अपने घरोंके वाय-पासके शिवालियों या रहके खेतोंका ध्यान करते होंगे। इसे रोकनेके लिए उन्होंने २३) की एक काठपेन्ड लारीकी और उसे तथा उसके बल्लड़ेकी अल्पा-अल्प दंड काठरियोंमें बाँधने लगे। पर, कहा उन्होंने यही कि जो परम पवित्र होती है, उसका मूत्र उससे भी अधिक पवित्र होता है और गोबर कितना पवित्र होता है, यह तो कहा ही नहीं जा सकता। मूत्र और

गोबरकी गंधसे दमा नहीं होता, दाद नहीं होता और बिवाई नहीं फटती । उससे स्मरणशक्ति तीव्र होती है क्योंकि ज्ञान-तंतु सदा सचेत रहते हैं । विद्यार्थीको और चाहिए ही क्या !

यह कहना तो व्यर्थ ही है कि उक्त दो कोठरियोंमें भी विद्यार्थी तो पहले हीसे रहते थे । चिथरूमलजी कई दिनों विद्यार्थियोंको डाँटते रहे कि तुम लोग ऐसे हो कि यह पशुतक तुमसे भड़कता है ।

उधर, गौ-माता गंध-मात्र देकर संतुष्ट न रही । वह विद्यार्थियों-पर मूत्र और गोबर का छिड़काव कर उन्हें अधिकाधिक पवित्र बनाने लगी और बार-बार रँभाकर बछड़ेका कुशल-मङ्गल पूछने लगी । बछड़ा उछलकर कुछ उत्तर देता था और उसकी हर उछालपर, चिथरूमलजीके डरके मारे विद्यार्थियोंका कलेजा बैठ जाता था ।

चिथरूमलजीने विद्यार्थियोंके हितके लिए बहुतसे नियम बनाये । उनमेंसे कुछ नियम और उनके उद्देश्य दिये जाते हैं—

१—विद्यार्थियोंके लिए सबसे सस्ता अन्न लाना [ उद्देश्य—विद्यार्थी अधिक खाते हैं । महुँगा अन्न खाकर उनका पेट न भर सकेगा । ]

२—भाट सेर आटेके पराठे आध पाव धीसे बनवाना [ उद्देश्य—धीसे चर्बी बढ़ती है, अधिक धी खानेसे कहीं विद्यार्थियोंके मास्तिष्कमें चर्बी न बढ़ जाय । तब उनकी बुद्धि स्थूल हो जायगी । ]

३—यदि विद्यार्थी कहीं निर्मंत्रण खाने जायें तो वहाँ प्राप्त उनकी दक्षिणा आदि अपने पास जमा कर लेना [ उद्देश्य—विद्यार्थी क्षुद्र होते हैं । कुछ पैसों हीसे, चूहोंकी तरह उछलना शुरू कर देते हैं । १]-

१।) इच्छा होनेपर कोई कुर्मा न दर बैठें । ]

४—रातको भाट पत्रके पाले ही सब विद्यार्थी अपनी कोठरीमें वन्द हो जायें [ उद्देश्य—विद्यार्थी रातमें बहुत शोर-गुल और आपसमें

मार-पीट करते चलते हैं । इससे नागरिकोंकी शांति नष्ट न हो । ]  
 ५—पुलिस किस तरह लोगोंको फँसाती है और तब किस तरह उनपर शारीरिक अत्याचार करती है, इसके अतिरिजित विवरण बीच-बीचमें विद्यार्थियोंको सुनाना [ उद्देश्य—विद्यार्थियोंका स्वभाव ही लुगली खानेका और शिकायत करनेका होता है । उन्हें पुलिसतक जानेका साहस कभी न हो । ]

इत्यादि ।

इसी क्षेत्र व पाठशालामें एक दिन रातको दस दजे साधारण नियमोंका भंग देखनेमें आया—अर्थात् चौकमें भिट्टीके तेलकी एक टिबरी जल रही थी, विद्यार्थी दादलानमें सटे-सटे बैठे थे, एक विद्यार्थी चौकके गीले पत्थरपर लेटा था । उसका नाम रामसुन्दर था ।

दादलानमें बैठे विद्यार्थियोंमें बहुत धीमे स्वरमें बात-चीत हो रही थी, जैसे वे कोई प्रड्यन्न कर रहे हों ।

एकने कहा—रामसुन्दर अब नहीं बचेगा ।

दूसरा—मर जाना ही अच्छा है । उसका मल धोले-धोते चित्त व्यग्र हो गया ।

तीसरा—उसे दवा पिला दो ।

चौथा—बेल-पत्ती और मट्ठा पिलानेसे लाभ क्या होगा ? उसे गङ्गाजल पिलाओ ।

पाँचवाँ—१५ दिनसे मर रहा है । कुछ दवा भी तो नहीं हुई ।

दूसरा—सेठजी (अर्थात् चिथरुलमलजी) से हेमोपथिक दवा मिलानी दी । उनकी कई-शीशी खाली हो गयीं ।

चौथा—सेठजी साले कहाँके डाक्टर हैं ?

पहला—शाळ-वाला बहुत धीरेसे कही । कहीं सुनता न हो ।

तीसरा—रामदान चलना पड़ेगा ।

पहला—मैं उठाऊँगा नहीं । इसके भयानक रोग है ।

कई एक साथ—हम भी नहीं उठायेंगे ।

पाँचवाँ—सेठ कहेगा तब !

पहला—सेठ ही उठावेगा ।

चौथा—सेठने अपने बापको तो उठाया ही नहीं होगा ।

तीसरा—सेठ निकाल देगा तब !

दूसरा—गङ्गा-तट तो है ।

छटा—आज जाड़ा कितना है !

दूसरा—यहाँ कौन आग तापते हैं ?

पाँचवाँ—अस्ती गये हो कभी ? सङ्कटभोचनके सामने सण्ढासियों (संन्यासी)के लिए लोगोंने कैसे महल बनवा रखे हैं ?

पहला—संन्यासियोंने सब-कुछ त्याग दिया है ।

तीसरा—हमको वह मकान मिल जाय तो हम भी त्याग दें ।

दूसरा—क्या त्यागा है ? मालपुवे खाते हैं, कपड़े-रुपये इकट्ठे करते हैं, बिजली जलाके सोते हैं ।

पाँचवाँ—अरे, चोटी कटायी है, जनेऊ तोड़कर फेंका है !

दूसरा—दण्ड-कमण्डल लादे धूमते हैं । जनेऊ और चोटीका बोझ उससे अधिक है ?

तीसरा—तुम दण्ड-कमण्डल ले लो, भोज करो ; मना कौन करता है ।

दूसरा—मेरे तो स्त्री है ।

पहला—उसे भी लाके किसी मकानमें रख लेना । भिक्षा वहीं जाके करना ।

तीसरा—मुझे दान कर दे !

इसी समय रामसुन्दरने हिचकी ली । तीसरेने कहा—उसे कोई याद कर रहा है ।

पहला—हाँ ।

दूसरा—यमराज ।

चौथा—अब तो यमदूत यहाँ आकर खड़े हो गये होंगे ।

पाँचवाँ—एक ऊपर बैठा है ( श्रीमान् चित्रलमलकी ओर संकेत था । )

तीसरा विद्यार्थी उठा । उसने गङ्गाजलका लोटा उठाया और रामसुन्दरके मुँहमें पानी डालनेके लिए झुका ।

रामसुन्दरका चेहरा काला पड़ गया था, पुतलियों स्थिर थीं, आँखोंके किनारेसे पानी बह रहा था । शरीर कभी-कभी काँपकर तिकुहनेकी वेधा करता था । मुँहसे बेलपत्ती और मद्धा बह रहा था, उससे उसकी रदनके आस-पासका सब स्थान भीग गया था ।

विद्यार्थीने देखकर लोटा रख दिया और दालानमें आकर कहा—  
रेठजीको बुलाओ ।

—क्यों ?

—मर रहा है ।

—यह तो तीन दिनोंसे ऐसे पड़ा है ।

—अब देर नहीं ।

—न मरा तो खेत दिया देगा कि तमें क्यों बुलाया ।

तीसरे विद्यार्थीने झुल्ला गोला और तब मुनीमजीको बुलाने पर चला ।

मुनीमजी छतपर आँधरेमें एक मुँहरेसे लगे हुए, सामनेके मकानकी

ओर एकटक देख रहे थे। मोहल्लेमें कौन क्या करता है, यह जाननेकी उनमें अदम्य जिज्ञासा थी—सदा से। इसके लिए वे कई बार तिरस्कृत, लांछित और 'जूकृत' (बुतियानासे बना हुआ देशी भाषाका रूप) भी हो चुके थे। पर, 'लागी नहीं छूटे राम चाहे जिया जाय।'।

विद्यार्थीने एकाएक 'सेठजी' कहा तो वे चौंके, काँपे और घूम पड़े। पर सामने विद्यार्थी मात्रको देखकर आश्चर्य भी हुए और क्रुद्ध भी।

उन्होंने शीर्ष-बंध-विनिदित स्वरमें कहा—वाह महाराज ! तुमने तो ऐसा डरा दिया कि हाथसे चिलम गिर पड़ी। छः आनेका माल (अर्थात् गाँजा) मिट्टीमें मिल गया।

विद्यार्थी—रामसुन्दर मर रहा है।

सुनीमजी—अभी मरा नहीं ?

—कदाचित् अब मर चुका हो।

—विद्यार्थी मरते भी कितने प्रपञ्चसे हैं। १२) की दवा खा गया और मरता भी नहीं।

—जरा चलकर देख लीजिए।

—मैं उसकी घरवाली हूँ, मैं क्या देखूँ ?

—तो हमलोग क्या हैं ? हमें क्यों देखें ?

सुनीमजीने तार सप्तकके गान्धारके आस-पास स्वर कायम करके कहा—तुम साले और किसलिए हो ? हरामीका खाना, पड़े रहना। चमार कहाँके। तुमसे चमार भी अच्छे।

अन्यत्र चरमा-परीयती नियति उच रामय कदाचित् उच छत्पर ही यो शोकि —

उच विद्यार्थीनि निःशोक भवते सुनीमजीके केशेण तान्धर तमाचा



मारा। उसका शब्द वैसा ही हुआ जैसा मिट्टीके लोंदरेपर तमाचा मारनेसे होता है।

मुनीमजीका हाथ गालपर जाकर स्थिर हो गया—वे तो स्थिर थे ही।

मुनीमजीको पूरा चैतन्य-लभ उस क्षण हुआ, जब उन्होंने भुँड़रेपरसे अपना शरीर गलीर्का ओर, नीचे गिराकाया जाता देखा। वे न-जाने क्या निव्वलाये और दूसरे क्षण वे छतपर पटक दिने गये।

मुनीमजी काँपते हुए उठ खड़े हुए। विद्यार्थी सामने खड़ा था।

उन्होंने हँसनेकी चेष्टा करते हुए कहा—आप, आप तो दिल्लीगीमें नाराज हो गये।

विद्यार्थीने कहा—मैं भी दिल्लीगी कर रहा था—तुम्हारे चित्तानेसे अधूरी रह गयी।

मुनीमजीने जेबसे दो रुपये निकाले, विद्यार्थीके हाथमें रखे और कहा—किरीसे कहना मत महाराज !

विद्यार्थीने कहा—राममुन्दर भर रहा है।

मुनीमजीने उत्साहसे कहा—हाँ, हाँ, चलिए। हँ हँ ! काशीमें गरुडनाथ ! शम्भ भाग ! चलिए, मरतेकी देखना, उसे चट-पट फूँक डालना, यह सब बड़े पुत्रका काम है। चलिए।

तभी किसी गड़ोसीने जोरसे पूछा—मुनीमजी ! निव्वलाया क्यों था ?

मुनीमजीने तत्परतासे कहा—कोई नहीं। मैंने सपना देखा था, डर गया था।

फिर मुनीमजीने विद्यार्थीने कहा—भार, तुम इतनी जल्दी सीढ़ी मत उतरने। मैं भी जान ही पाऊँगा ही। यह न समझना कि मैं डरता हूँ। मैं एक बार परेतसे कुम्ती लड़ चुका हूँ।

संठजीको देखकर नीचेके सब विद्यार्थी खड़े हो गये ।

संठजी गंभीरतासे रामसुन्दरके पास जा बैठे ।

पहले विद्यार्थीने कहा—डाक्टर देख लेता तो अच्छा होता ।

संठजी बोले—डाक्टर जान बचा सकते तो वे खुद ही क्यों मरते ? 'कर्मणोवाधिष्ठास्ते' गीतामें भगवान्ने कहा है । कर्म हमलोग कर ही रहे हैं । रात-दिन जागते हैं, पानी, गोबर, गोमूत्र, बेलपत्ती सभी कुछ खिला-पिला रहे हैं । इसपर भी मर जाय तो इसके बापकी तकदीर ।

चौथेने कहा—अब तो देर नहीं मालूम होती ।

दूसरा बोला—तैंने कितने आदमी मरते देखे ! संठजी आप देखिये, आपने बहुत देखे होंगे । बड़े आदमी ठहरे ।

मुनीमजी रामसुन्दरपर झुकें, तभी उसने जोरकी हिचकी ली, साँस कुछ रुका, घरघराहट शुरू हुई ।

मुनीमजी चौंककर पीछे हटे, बोले—काटेगा क्या ? एँ !

फिर देखकर परमाया—बस, अब मरता ही है ।

यह कहकर वे रामसुन्दरके कानमें चिल्लाने लगे—राम ! राम ! फिकर मत करो, चैनसे मरो ! तुम्हारे घर खबरें भेज दी जायगी, समझे !

पाँचवेंने कहा—यह भी कह दीजिये कि तुम्हारा सामान तुम्हारे घर-वालोंको दे दिया जायगा ।

मुनीमजीने कहा—सामान ! सामान क्या है !

—क्यों ! कीसी धोती, लोटे, आचमनी, गिलास, माला, रुपये-पैसे !

मुनीमजी—एसे का मन और अपनी अन्न रास बचावा दिखायी देती ऐ । \* पीली पीस हो गया । गोड़ेसे आने रुपये-पैसे हो गये ।

छठेने पूछा—तैरा आपके पास क्या-क्या ऐ ?

मुनीमजीने हँसकर कहा—आपका तो सब सखा ही है। मैं तो राम-सुंदरकी बात कहता हूँ।

तीसरे विद्यार्थीने कहा—बतला ही क्यों नहीं देते!

मुनीमजीने कहा—इसमें बात ही क्या है। जो कुछ आपलोग कहिएगा, मैं दे दूँगा।

छठेने कहा—साफ-साफ कहिए।

तीसरेने कहा—चलो हुआ। सब ठीक हो जायगा।

तभी रामसुंदरने हिचकी ली, उसकी आँखें फेरलीं, चरबराहट बंद हो गई, प्राण निकल गये, मुँहमें बेलपत्ती और मटेका धौल बहने लगा।

मुनीमजीने कहा—श्री हरी! श्री हरी! भव-सागरके पार गया! आपलोग गीताका पाठ करो। हाँ, धर्मछेत्र कुल्लुख

किसीने पाठ शुरू न किया।

मुनीमजी बोले—अब आप लोग सो जाइये। सुबह

तीसरे विद्यार्थीने कहा—नहीं। शव अभी उठना चाहिए।

मुनीमजीने कहा—जैसी आप लोगोंकी इच्छा। आपलोगोंको ही तकलीफ होगा।

तीसरे विद्यार्थीने कहा—हम लोग नहीं उठावेंगे।

—क्यों?

—हमारी इच्छा।

—तब कौन उठावेगा?

—आपलोगोंने बहुत बड़े बड़े नामके परिनिमि हैं, क्या उठाएंगे।

मुनीमजीने मुँहमें आग भर-भर मुसकरकर कहा—यह क्या!

और वे गुरगुरने धाकर आये। रामदा विद्यार्थी उठकर पीठे पड़े। जब

वे दरवाजा खोलकर बाहर हों गये तो उसने उसे भीतरसे बन्द कर लिया।

×

×

×

दरवाजा बन्द होनेपर मुनीमजी चार-छः कदम चले और तब दरवाजे पर नजर गाड़कर खड़े हो गये, मानों वे उस 'क्षेत्र व पाठशाला' से सदा के लिए निकाल दिये गये हों। वे ऐसे खड़े थे जैसे गङ्गा नहाकर आता हुआ कोई विप्र चमारसे लू जानेपर खड़ा हो या, बीसों बरस बाद लौटा हुआ पथिक अपना घर पहचान कर भी संदेहमें पड़ा हो।

कुछ देर बाद मुनीमजी आगे बढ़े। चौड़ी गलीमें आनेपर तीन-चार कुत्ते उनके पीछे इस तरह चले, मानों ऐसे समय उन्हें गलीमें देखकर उन्हें ( कुत्तोंको ) यह सन्देश हुआ हो कि वे ( मुनीमजी ) किसीका खून करने जा रहे हों और वे ( कुत्ते ) इस बातकी सूचना देते चल रहे हों।

उस समय मुनीमजी जिस तरह चल रहे थे उससे यह ज्ञात होता था कि वे ठोकर खाना पसन्द करते हैं, धीमे चलना नहीं। उन्हें कोई पहलवान उस समय देखता तो बहुत-से पैतरे सीख लेता।

५-७ मिनट बाद मुनीमजी एक ऐसे स्थानपर आये, जहाँ दो जम्बरी ईंटे रखी थीं। उन्होंने यह विचार न किया कि किसी परेभवकारी ने वे ईंटे, वहाँ, क्यों रखी हैं। उन्होंने झुककर एक ईंट उठाई और भरपूर ताकत लगाकर कुत्तोंकी ओर फेंकी कुत्ते पीछे भाग गये, तब मुनीमजीने दूसरी ईंट उठाई और उसे लिए कुत्तोंकी ओर दौड़े। कुत्ते जैसे उन्हें निहाते हुए भाग चले। कुछ दूर दौड़कर मुनीमजी हाँफते हुए खड़े हो गए और लौटे। चलते-चलते वे सड़क पर पहुँच गये। तब उन्होंने पटरापर श्री लक्ष्मीकी पुजापर ईंट रत्न दी और आगे बढ़े।

गाते वे सोने संगम-तट पर गये, शाय-मुँह घोया और ऊपर चले।

अंतिम सीढ़ियोंके पास में उस स्थानपर आये, जहाँ एक साधुजी और तीन-चार व्यक्ति आग ताप रहे थे। एक व्यक्ति प्रेम-पूर्वक, दत्त-चित्त हो कर हथेलीमें गोंजा मल रहा था। मुनीमजी भूल गये कि इन व्यक्तियोंने उन्हें नीचे उतरते वक्त इस तरह देखा था जैसे वे गंगाजीमें डूबने जा रहे थे। वे उनके पास गये और साधुजीको 'नमो नारायण' करके बैठ गये। साधुजीने 'आओ बन्ना' कहकर उनका स्वागत किया, और पूछा—  
किधरसे भगतजी ?

मुनीमजी—नींद नहीं आती श्री, सोचा कि सतसंग हो जाय।

साधुजीने प्रसन्न होकर कहा—अच्छा, अच्छा। दे बेटा, भगतको दे।

गोंजा मलनेवालेने चिलम भरी और 'भगत' के हाथमें दे दी।

भगतने उसे साधुजीकी ओर बढ़ाकर कहा—परसादी हो जाय बन्ना।

बाबाने दम लगाना शुरू कर दिया। चिलम हाथोहाथ धूमने लगी।

मुनीमजीका जाड़ा भाग गया, चित्त प्रसन्न हो गया।

एक लम्बा दम मारकर बाबाने देरतक नाक और मुँहसे धुँआ निकाला, उसे विलीन होते देखा और तब पूछा—सुराजमें झंझट क्यों होती है ?

मुनीमजी इस तरह बैठे जैसे घास खोदनेकी तैयारी कर रहे हों और बोले—कुत्ते ! जब तक हिंदुस्तानमें कुत्ते हैं, और भले आदमियोंकी रास्ता चलना बंद करनेपर लगे हैं, तबतक सुराज कैसा ?

बाबाजी कदाचित्त कबीरके चेलोंके वंशमें थे; उन्होंने मुनीमजीकी बातका कुछ अर्थ समझा और कहा—लाल रूपयेकी बात कही है।

मुनीमजी उत्साहित होकर बोले—सबको मार डालना चाहिये।

अबकी बाबाजी चुप रहे।

मुनीमजी कहते चले—और ये विदारथी ! चमार सान्ने। इरामका

खाना, पड़े रहना ! मुर्दा तक नहीं उठावेंगे । बस, बोरेमें बाँधके मिरिचके टापूमें छोड़ दें ।

बाबाजी ध्यानसे मुनीमजीको देख रहे थे । उन्होंने पूछा—इस ल्याइनमें कबसे हो ?

मुनीमजी कुछ समझे नहीं ।

बाबाजीने अपना आशय स्पष्ट किया—गोयंदागिरी . ( जासूसपन ) कबसे कर रहे हो ?

मुनीमजीने कहा—गोयंदा कैसा ? मैं तो अपने छेत्रके विदारथियोंकी बात कह रहा हूँ ! अच्छा, अब चले ।

मुनीमजीने खड़े होकर एक अठ्ठी बाबाजीके पास रखी, हाथ जोड़े और आगे बढ़े ।

मुनीमजीके दूर जानेपर बाबाजीने गौंजा मलनेवालेसे बहुत धीरेसे कहा—गोयंदा यहाँतक लगा आ गया । अभी यहाँसे भाग चलो । पुलिस बुलाने गया है ।

वे लोग तुरत उठे, नीचे उतरे और एक नावपर चढ़कर उसे खोल दिया । बगलकी नावोंके सहारे उन्होंने अपनी नाव बाहर निकाली । धीरेसे डालें लगाये और तब रामनगरकी ओर बढ़ने लगे ।

×

×

×

मुनीमजी बंगाली टोलेसे केदारघाटकी ओर बढ़े । सब दूकानें बन्द थीं । कहीं-कहीं हलवाइयोंकी भट्टियोंके पास दो-एक कुत्ते सोये थे । वहाँ मुनीमजीने चाल तेज कर दी, पर वे कुत्ते सोये ही रहे । मुनीमजीने मनमें कहा—ये नावद उस जातिके कुत्ते हैं जो बीच राइकांगर लेटकर, खत खाकर, रात और कलोक पहावालीका भेदा करती हैं ।

बहुत दूर आनेपर मुनीमजी एक भवानके द्वारपर खड़े हुए और

उसकी कुंडी खटखटाने लगे । कुछ देर बाद दूसरे तल्लेकी गिड़कीसे आँककर किसीने पूछा—के ? ( कौन ? )

मुनीमजीने कहा—हम हैं । हमारे घरमें मुर्दा मर गया है । आपके घरमें कोई मर जाता है, तब 'हरिबोल' करनेवालोंको कहाँसे बुधते हैं ?

उसने कहा—'खड़ा रहो' और वह पीछे हटा । मुनीमजी सोचने लगे कि वह नीचे आकर बतावेगा । दो मिनट बाद उनके ऊपर एक बाल्टी पानी एक साथ गिरा । वे बेतहाशा सामने भागे और कुछ दूर आकर अपना अलवान शरीरपरसे उतारकर उसे झटकारा और तब उससे सिर पोंछने लगे । यह क्रिया करनेके बाद वे उस ओर मुँह करके खड़े हुए जिस ओरसे भागे आये थे और चिल्लाकर बोले—हमारे भाईके समुद्रके यहाँ बहुतसे बड़ाली काम करते हैं । कल राधको निकलवा देंगा । समझा !

तब वे आगे बढ़े । थोड़ी दूरपर उन्हें एक बड़ा मकान मिला जिसके बाहर चौड़ा खूबतरा था और वह बड़े-बड़े खंभोंपर पाटा हुआ था । उसपर ५-७ आदमी सोये थे । मुनीमजीने खानमें उन्हें देखा और जब उन्हें निश्चय हो गया कि उनके पास बाल्टी, लोटा और लाठी नहीं है, तब उन्होंने एक आदमीका कंबल खींचा । वह खंगमापामें—'आ गया रे, मार डाला रे' कह कर उल्ला । साथ ही और लोग भी—'एँ, क्या, कौन, चोर' कहते हुए उठ बैठे । इसके बाद उन लोगोंने आपसमें लड़ना शुरू कर दिया । विषय यह था कि कंबलवालेको वहाँ सोना चाहिए था कि नहीं, जहाँसे सहजमें कंबल खींचा जा सके; विशेषतः जब उससे कह दिया गया था कि वहाँ न सोये, क्योंकि सब 'हिन्दुस्तानी' ( धू० पी० के निवासी ) बदमाश, डकैत और गिरहकट होते हैं ।

मुनीमजीने बीच हीमें जोरसे चिह्लाकर कहा—हमको मुर्दा दोनेवाले और 'हरिओल' करनेवाले धंगालियोंकी जरूरत है ।

वह भुनते ही उन लोगोंकी लड़ाई एकदम बन्द हो गयी और वही कम्बलवाला बोला—आपको मड़ाफेला वामुन दरकार है ?

मुनीमजी—इमको मड़ा-फेला दरकार है, वह चमार हो तो क्या ।

—हम चमार भी दे सकता है । बनारसमें बहुत लोग मरने लगा है । खाली वामुन कहाँतक सकेगा ?

—तुम मड़ा-फेला हो ?

—गोई तो बोला । आपको चमार दरकार है ? आप कोन जात है ?

—कोई जात है, तुमसे मतलब !

—नहीं, पेसा ही पूछा । हमको मुर्दासे मतलब है ।

—हम सेठ है । हमारा घरमें

—आपका बापजी मर गया ?

—नहीं, हमारा

—लरिका ?

—क्या बोलता है साला !

—माप करेमा सेठजी । सब मरनेको वास्ते पैदा होता है ।

—हमारा पाठशालामें एक पण्डित मर गया । विद्धारथी ।

—विद्धारथी ? विद्धारथी बहुत बदमास होता है । हम नवहीपका आदमी है । हमारा काका मस्त (बड़ा) पण्डित थे । हमारा काकीको साथ एक विद्धारथी भाग गया । वही दिनसे हमारा काका हमको संसक्ति नहीं पढ़ाया । हम बोला—'हम पढ़ेगा' । काका हमको चारने निकाल दिया । हम काशी चला आया ।



सेठजी—तुम बिहारथीको उठावेगा कि नहीं, साफ बोलो ।

—अलबत उठावेगा । हम बिहारथी लोगमें सम्पर्क नहीं रखता, किन्तु उसको जला सकता है ।

—तुम क्या लेगा ?

—कितना आदमी चलेगा ?

सेठजी क्रुद्ध होकर बोले—हम क्या बरात निकालेगा कि हजार-दो-हजार आदमी ले चलेगा ?

—बड़ा आदमी सब कुछ करने सकता है ।

—हमारा कोई आदमी होता तो देखता ।

—कोई फिकिर नहीं । हम सदा हाजिर रहेगा । इसको क्या करने होगा ?

—तुमको मुर्दा उठाना होगा और जलाना होगा ।

—पिंडी (पिंड) आप देगा ?

—हम क्यों देगा ? तुम पागल है क्या !

—तब सात आदमी लगेगा ।

—काहे को ?

—चार आदमी उठावेगा, दो आदमी खोल-मँजीरा बजावेगा, एक आदमी पिंडी देगा एवं सत्कार ( शव-दाह ) करेगा ।

—क्या लेगा ?

—बिहारथी मोटा है ना पतला ?

—तुम्हारा माफिक ।

—ओ, आपसे कुछ मोटा है । कुच्छ हर्ष नहीं । तीस टाका ( रुपया ) लेगा ।

—तीस टाका !

—बिदारथीका वास्ते बोल दिया । आपका बापजी होनेसे १२५ टाका छेता ।

—बहुत बोलता है ।

—कुछ नहीं बोलता है । सात आदमी पाँच घंटा चलेंगे, मड़ा उठा कर ले जायगा, जलायगा, चार-चार टाका भी नहीं पायगा ?

—पिंडीका काम नहीं है, उसका घरवाला करेगा ।

—अच्छा बात है । चार टाका कम देगा ।

सेठजीने तब कहा—तुम ३० टाका कैसे कहा ! ६ आदमीका २४ टाका हुआ ।

—२ टाकाका सनई लगेगा ।

अगला सेठजीने मंजूर किया ।

कंबलवाला बोला—हमको १७ टाका दीजिए । १० टाका आगाम (पेशगी) वादमें कटेगा ।

—और ७ टाका ?

—७ टाका हिसाबमें शामिल नहीं है । उक्तका हम लोग गौजा-द्वारा पियेगा ।

—मतलब कि ३३ टाका लगेगा ?

—आलबस ! लोग अपना 'मड़ा' ऐसे ही उठाने सकना है, दूसरा का मड़ा उठानेका गाले शराब पीना पड़ता है ।

—७ टाकाका शराब गौजा पीकर चलेगा ?

—पीकर चलेगा. गवान (इमशान) में पियेगा, घर आकर गिन्तगा ।

—इतना पीयेगा ?

—सहित केतना है, देखता है ?

—हमको ता नहीं लगता ।

—आपको पयसाका गरमी है । आप अपना पयसा हमको दे दे तो आपकी भी लगेशा ।

सेठजीने १७) निकालकर, कई बार गिनकर दे दिये । रुपये लेकर वे लोग आपसमें कुछ परामर्श करने लगे । कुछ देर बाद सेठजीने कहा—जल्दी करो ।

एकने उत्तर दिया—भला हमारा नाम शारदी ही गया । वह कहीं भागने तो सकता नहीं !

सेठजीने क्रुद्ध होकर कहा—हम अपना घरमें पानी नहीं पी सकता है ।

कोई उत्तर न मिला । वे लोग रात रुपयेके विशिष्ट सम्बन्धके चिन्तनमें डूबे हुए थे ।

मुनीमजीने कहा—देखो, एक बंटके भीतर जानेसे दो टाका और देगा ।

उन लोगोंने कहा—आप जाइए । पता बोल जाइए ।

मुनीमजी—घर न मिला तो ?

उत्तर—बसराज उतना दूरसे आपका घर पहचान लिया, हम बतलाने से भी भूल जायगा !

मुनीमजी पता पतलाकर नल पड़े । उन लोगोंने चिल्लाकर कहा—आप तैयार रहेगा, हम लोग आता है ।

× × ×

मुनीमजी लगेकी शर्दीमें पहुँचे तो देखा कि कुत्ते संत पहचाननेकी श्रमासे पड़े हैं ! वे लगेके दरवाजेपर खड़े हुए तो उन्हें बात हुआ कि भीतरजाने निकला रहे है और बाँक-बीनमें एक कुत्तेको खपक रहे है ।

दरवाजेकी कुली बहुत सावधानीसेर मोहल्लेवालेकी निहायतों और

में हलकने लगे । खिड़कियोंसे मुँह बाहर निकलने लगे और मुँहोंसे वे बातें:—सोना हराम कर दिया । रात-रात भर बाहर धूमना है तो दरवान रखो । क्या कोई मर गया ? विदारथी क्या बरसे हो गये ! चिल्ला तो रहे हैं । कल ही पुलिसमें रिपोर्ट करेंगे ।

मुनीमजीने सब बातें शांत रहकर सुनीं जैसे बोट मॉगनेवाले सुनते हैं और तब उन्होंने कहा—जब सब विद्यार्थी जीते रहते हैं, तब कभी घोर-गुल होता है ? किसीने सुना है ? धरमका काम है भाइयो ! काफन दो, लकड़ीके लिए रुपये दो और विदारथीको समसान ( इमशान ) ले चलो । तुम लोग अमर नहीं हो, सब मरोगे, हमारे विदारथी तब काम आवेंगे । एक दिनका घोर-गुल गर तब मरोगे ! हाँ भाइयो !

मुनीमजीने सिर ऊपर उठाया । सब खिड़कियों बन्द थीं, कोई सिर बाहर न था । उन्होंने विजयीकी भौंति कहा—छी-छी ! धरमके नामपर सब भाग गये । खिड़की बन्द कर लेनेसे मौत नहीं भागेगी । वह ठीक वक्तपर आ जायगी । धरम ही साथ जायगा ।

आकाश-भाषण समाप्त कर वे गलीके मोड़पर आये और एक दुकानके पट्टेपर बैठ गये । दो-चार मिनट बाद ही खोल-सजीरेकी आवाज और हरिकोल सुनायी पड़ा । मुनीमजी कहने लगे—ये बड़ाही सुखसे खोने भी नहीं देते । चाय हुई और मरना शुरू कर दिया ।

और दो-चार रिफ्ल्ट बाद हरिकोलवालीका लुटस पास आया । मुनीमजीने दीड़कर खोलेकलेका हाथ चकड़ा और बहुत ही क्रुद्ध होकर बोले—तुमने क्याका किया, मुझे विजयीका ले चले । हम पुलिसमें सपट करेगा ।

सुलह तक गया । खोलकलेने कहा—खोले केरजी ! हम आपके सिंग आभा, आद खाथी है, जाम पढ़कर देख ले ।

मुनीमजीने वण्डे देखा । चार आदिमी एक खाळी खाट उठाये हुए थे । सबको आंघोने जैसे बन्द थीं और पैर टगमगता रूंद थे ।

मुनीमजीने सबको लेकर 'खोत्र व पाटद्याळा' के सामने जाये और उनसे कहा—थोड़ा देर हरिभजन करो ।

खोत्र और मजीरा बजने लगा । उन्हें बजानेवाले कीर्तन करने लगें । खाटवाले खाट रखकर खड़े हो गये ।

मुनीमजीने उनको आंर देखकर पूछा—ये खोत्र कीर्तन नहीं जानते ? खोत्रवाला बोला—ये खोत्र सब पण्डित आदिमी हैं । ( एककी-ओर संकेतकर ) यह थाको हरि कवचर्ची—आह बहुत बड़ा तार्थीक है । 'मंडा' जल्दानीका बचका सब मंतर जानता है । पहले केचन करला था । यह दिखू—

मुनीमजीने कहा—फिर न जाने कब संभाव्य होया । ऐसा सुणी-लोकको केचन करने वाला ।

उन खोत्रोने केचन शुरू किया । महल्लेयाभोने फिर खिड़कियां खोलने पर मुनीमजीको देखते ही बन्द कर लीं । इस चार खोत्र व पाट-द्याळा'का दरवाजा भी खुला ।

मुनीमजीने गरजकर कहा—हम तीस बंदा निकलाकर गये किमीने दरवाजा नहीं खोला ।

खोत्रोने कहा—हम खोत्र मोहमुद्दवारका पाठ कर रहे थे ।

मुनीमजीने—अब बजो । इन खोत्रोको देखते हों ? ये खोत्र बड़े-बड़े राजाका, मंत्रादि मंत्र पण्डित हैं । बहुत कुलीन हैं । तुम जैसीपर कृपा करनेसे फिर मंत्रादि भासन पित्तन है ।

खोत्रोने कहा—हम सब जानते हैं कि अवतार भरी उलयें । उन्होंने विरोध किया ।

मुनीमजीने ओखें तरेरकर कहा—तो तुम उठाओ । जानते हो, ऐसे पवित्र आदमी किस कठिनतासे आये हैं । अपनी बुद्धिके साथ पूरे (५५) खर्च किये हैं ।

एक विद्यार्थी—आप हमारा सामान दे दीजिए । हम यहाँ एक क्षण न रहेंगे ।

मुनीमजी—सबसे पुलिसके सामने सब सामान देंगे । तबतक ठहरो । इसके बाद उन्होंने केवल बन्द कराया और खाट उठानेवालोंको भीतर ले गये ।

खाटवाले रामसुन्दरको उठा लिये, उसे खाटपर पटककर उसे सीधा किया और तब वह मंतक प्रकाशित किया कि 'हिन्दुस्तानी' अधिष्ठ होते हैं, उनकी अधिष्ठता ही उनके साथ जाती है क्योंकि ये दिष्टता-पूर्वक भ्रमना भी नहीं जानते ।

खोल और मजीरवाला, दोनों आगे हुए, शेष चारोंने खाट उठायी और 'हरिवोल' के साथ वे आगे बढ़े । मुनीमजीने निजार्थियोंको क्षेत्र जमीनेको छाँड़ा तब उनके आगे ले गये ।

गस्ता धीरे-धीरे पाय हो रहा था क्योंकि गर्जामें अंधकार था—सभीका निराला, अज्ञानके यहाँ शायद उस दिन मेहमान आ गये थे । गर्जामें अंधकार जहाँ फाड़-फाड़कर चल रहे थे कि धर्म-स्वरूप किसी कुत्ते का आकार ही न पड़ जाय, नहीं तो इस अधर्मका फल तो पशुपति का आकार । उगते कानोंमें कीर्तनके पद भी पड़ रहे थे । इतना गर्जना प्रकार था—हे पापी ! इतने नरकर वेद विद्या कि इतना कितना अन्धकार है । फिर भी तु आत्ममत्तारे बारे आशुमिनी हो-के चारों अंधकर चले रहे । यमदूत तब अस्मिता अंध कर करेगे !

उन शमदूतोंने तेरे पितामह और प्रपितामहका अभिमान दूर किया है, इत्यादि ।

आधा शस्ता पार कर बुद्धस खड़ा हो गया । खाटवालोंने खाट उतार दी । खोलवालेने कहा—बड़ी मोहघरत हुआ, जरा गॉजा-टॉजा निकालो ।

मुनीमजी नीस कदम आगे बढ़ गये थे । वीरत्तन न सुनकर उन्होंने पीछे देखा और लौट पड़े । उन्होंने चिढ़कर कहा—अंधेरेमें तो कन्ने आ रहे थे । रोशनी भिड़ते ही खड़े हो गये ।

भाचोहरि चक्रवर्तीने कहा—वह कंधा दरद होने लगा । जरा सुस्ता-येगा नहीं ।

मुनीमजीका ध्यान खाटकी ओर गया और वे चीखकर बोले—  
मुर्दा कहाँ गया ?

शबने खाटकी ओर देखा । वह खाली थी ।

मुनीमजी—कहता है कंधा दरद हो गया । मुर्दा कहाँ है ?

सब एक दूसरेका मुँह देखने लगे ।

मुनीमजी—साले भद्र पीकर चलते हैं । कहाँ रास्तेमें गिरा दिया होगा ।

शिवूने कहा—सदा भद्र खाता है, कमी मुर्दा नहीं गिरा ।

मुनीमजी—तुम्हारा तांतरिक भायब किया होगा ।

भाचोहरि—हम कई बरसेसे जान लिया है कि मुदासे बेसी काम जीतासे होता है ।

खोलवालेने अपने साथियोंसे पूछा—मुर्दाकी खाकर खाटपर रखे था कि नहीं ?

भाचोहरि जगैरूह निकिस लशम न दे सके । मुनीमजी गरजे—  
शरानी ! हम त्पर दरद उठेगाया ।

अंतमें यह निश्चित हुआ कि सब लोग क्षेत्रतक वापस चले, मुर्दा कहीं पड़ा ही होगा। इतनी देरमें कुत्ते भी साफ नहीं कर सकते।

थाकोहरिने कहा—मुर्दा अलग्गल मिलेगा, अगर वह पलायन नहीं किया है।

मुनीमजी—मुर्दा भी कहीं भागता है !

थाकोहरिने नजीर देकर बतलाना शुरू कि मुर्दे पलायन करते हैं और इस तरह कि जीता आदमी उन्हें पकड़ नहीं सकता।

मुनीमजी उन्हें लेकर चले। सब लोग गलीमें फैलकर चले कि रास्तेमें मुर्देकी सूचना पैर तुरत दे दें।

आधा रास्ता आनेपर इन लोगोंने देखा कि गलीके दोनों ओरके चबूतरोंपर २५-३० आदमी बैठे हैं और २-३ कालटेन जल रही हैं। मुनीमजीने कहा—उद्योगीकी तलाशना भगवान् करता है। इन्हींसे एक कालटेन ले लो।

यह कहकर उद्योगकी पराकाष्ठा प्रदर्शित करने और भगवान्के अनुग्रहका उपयोग करनेके लिए मुनीमजी चटपट आगे बढ़े। बाकी लोग नहीं बैठ गये और बिलाममें गाँजा भरने लगे। उनका विचार यह था कि कालटेन आ जाय तो फिर मुझे खोज की जाय।

मुनीमजीने अब लोगोंके पास आते ही कहा—बापूजी ! जस कालटेन ले लीजिए। हमारा मुर्दा खो गया है।

यह सुनते ही उस कालटेन पर एक व्यक्ति चबूतरोंसे उठकर इनके पास आया और पूछा—मुर्दा खो गया है ?

मुनीमजी—हाँ, रास्तेमें कहीं गिर गया है। बंगाली लोग मुर्देको ढूँढते हैं नहीं। शायद पीकर मुर्दा उठाते हैं। कहीं गिरा दिया।



वह व्यक्ति चबूतरेके कोनेकी ओर सुनीमजीका ले गया और पूछा—  
यही है ?

सुनीमजीने ध्यानसे देखा । रामसुन्दरने पलायन नहीं किया था ।  
वह सोया था ।

सुनीमजीने कहा—हाँ बाबूसाहब । यही है । भिन्न गया ।

—बंगाली कहाँ है ?

अब सुनीमजीने पीछे घूमकर देखा और बोले—साठे लोग वहाँ  
गौजा पी रहे हैं ।

—उनको बुला लाओ । उठा ले जाओ ।

सुनीमजी बहुत कठिनतासे उन्हें उठाकर लाये । साकोहरिने कहा—  
आप भागमान हैं । पलायन करके एही मुर्दा भिन्न है ।

अब लोग आकर खड़े हुए । चबूतरेवाले दबने इन्हें घेर लिया ।

उनमेंसे एक आदमीने पूछा—यह मुर्दा तुम्हारा बाप है कि जाना ?

—हमारा कोई नहीं । विदारथी है ।

—तभी ऐसे ले जा रहे थे ।

दूसरोंने कहा—मैं तुम्हारे लक्ष्मणका करने उठा और बाहर निकला  
तो देखा कि कोई सोया है । कितना जमाया, हिलिया—दुलाया, पर क्यों  
उठे ! कालेन उलूककर देखा तो बाप से बाप ! जड़में नहाना पड़ा ।

तीसरा—तुम्हें तो भेज शोर किया जैसे कोई गल्ल-रेल रहा हो ।

चौथा—तुम्हें यह करनेका क्या आन ! हँ भाइयो !

और उन लोगोंने सुनीमजी तथा मरुत खत्रीके एकएक आश्रयण  
किया और चपत, घूँसे तथा पद-पगार करने लगे ।

१० मिनट बाद प्रहार करने हुआ और दोनों पद-पगार करने ।  
तब चबूतरेवाले दबने मुर्दा उठानेकी आज्ञा दी ।

मुर्दा उठाकर सह दल आगे बढ़ा। खोल और मर्जीरा कभी-कभी बजता था, कीर्त्तन बन्द था।

रामसुन्दरकी चिता जल रही थी। रामसुन्दरके शरीरका कुल ही भाग अवशिष्ट था। एक ओर मुनीमजी और महा नामुन बैठे थे।

थाकोहरिने कहा—शराब नहीं पिया होता तो आज मर जाता।

दूसरेने कहा—कैसा तान-तानकर मारता था। गेहूँका रोटी खाता है।

तीसरा—जय हिन्दुस्तानीको उठायो तब विपत्ति पड़ा।

चौथा—मुर्दाका सामने मारपीट करता था! कितना खराब बात है। बंगालमें ऐसा कभी नहीं होता।

शिवू—सेठजी, दो-दो टाका और देने होगा। तीन दिन दवा खाने होगा।

सेठजीने क्रुद्ध होकर कहा—तुम तो ल्यात खानेका काम किया था, ल्यात खाया। हमारा मुफतमें इज्जत चला गया। और दो-दो टाका लेगा। शरम नहीं आता है ?

तभी पुलिसके चार सिपाहियोंने वहाँ आकर पूछा—सेठ चिथरूमल कान है ?

सेठजीने गद्गदसे खड़े होकर कहा—राम रामसाँब ! हम हैं।

—भगवान्परको चिता कौन है ?

—बह है साँब !

दो सिपाहियोंने सेठजीको पकड़ा,—बाकी रोके सीटी गजई। तभी मार १८-१८ मिकही और १८-१० प्रक्याह गन्धरे दिधे आये।

सीटी बजानेवालोंने पट्टा—बह चिता है।

गन्धरेवाले गन्धरे भोगाजीसे पर-परकर चिता बुझाने लगे।

सेठजीने बचराकर पूछा—क्या, बात क्या है ?

एक सिपाहीने त्तपत मारकर कहा—हरामी, बिदारथियोंको जहर देकर उनका माल हजम करनेका पेशा करता है ?

सेठजीने रोकर कहा—कौन बोला ?

सिपाहीने कहा—तुम्हारे बिदारथी । वे सब हवालातमें हैं ।

बंगाली हिंदी भले ही न जाने, उर्दूके कुछ शब्द अवश्य जानता है; उनमेंमें एक है—जहर ।

मड़ा-फेला बामुनोंने सिपाहियोंकी प्रारम्भसे सब क्रिया देखी, 'जहर' सुना और वे धीरे-धीरे पीछे हटकर, अँधेरमें हो गये और तब नीचे उतर कर घाट-ही-घाट, साँस रोककर, केदार घाटकी ओर भाग चले ।

पी फटने में जरा-सी देर थी ।

